पूर्वांचल खेती

वर्ष : 30 जून 2020 अंक : 06

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या 224 229 (उ.प्र.)

पूर्वांचल खेती

वर्ष 30 | जून, 2020 | अंक 06

संरक्षक

डॉ. बिजेन्द्र सिंह

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. ए. पी. राव

निदेशक प्रसार

तकनीकी सम्पादक

डॉ. आर. आर. सिंह

प्राध्यापक, मृदा विज्ञान

मो. नं. 9450938866

सम्पादक मण्डल

डॉ. अनिल कुमार

सहायक प्राध्यापक, प्रक्षेत्र प्रबन्ध

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक, पादप रोग

डॉ. पंकज कुमार

सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान

सम्पादक

उमेश पाठक

मोबाइल नं. 9415720306

इस पत्रिका में प्रकाशित लेख एवं विचार लेखक के निजी हैं। प्रकाशक/सम्पादक इसके लिए उत्तरदायी नहीं है

विषय सूची

कृषि वानिकी : एक टिकाऊ कृषि पद्धति 01
—आर0के0 आनन्द एवं रणधीर नायक

खरीफ में मोटे अनाजों की वैज्ञानिक खेती 05
—अखिलेश कुमार यादव, के. एम. सिंह, आर. के. सिंह एवं आर. के. आनन्द

वर्षा ऋतु में हरा चारा उत्पादन 07
—एस. के. सिंह, एस. के. तोमर, विपुल सिंह एवं सुरेंद्र सिंह

उर्द की उन्नत खेती 11
—संजीतकुमार, नरेन्द्र प्रताप एवं ए पी राव

मूंग की उन्नत खेती 14
—संजीतकुमार, नरेन्द्र प्रताप एवं ए पी राव

वैज्ञानिक विधि से खरीफ में प्याज उत्पादन 17
—एस.के.वर्मा, समीक्षा एवं गौरी शंकर वर्मा

पैडी ड्रम सीडर द्वारा धान की सीधी बुवाई 19
—सौरभ वर्मा, बरूण कुमार एवं एस.के. वर्मा

अरहर की वैज्ञानिक खेती 21
—विपुल सिंह, एस. पी. सिंह, एन. पी. शाही एवं एस. के. तोमर

खरीफ मक्का उत्पादन तकनीकी 24
—नरेन्द्र प्रताप, संजीत कुमार, ए0 पी0 राव

स्टीविया—प्राकृतिक मिठास का उत्तम विकल्प 27
—अनु सिंह एवं ए. पी. राव

तिल की उन्नत खेती 29
—के.के. श्रीवास्तव, राजेश, सत्य प्रकाश, अमरनाथ सिंह एवं शिवांगी नेगी

कद्दूवर्गीय सब्जियों का कीटों से बचाव 31
—प्रेम शंकर, एस.एन. सिंह, आर.वी. सिंह, एवं राकेश शर्मा

जून माह में किसान भाई क्या करें? 33

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के 34

बॉक्स सूचनाएं

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये, आगे बढ़िये 32

प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

विश्वविद्यालय के कार्य क्षेत्र में स्थापित विभिन्न कृषि विज्ञान/ज्ञान केन्द्र एवं अनुसंधान केन्द्र

क्र. सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	वरिष्ठ वैज्ञानिक/अध्यक्ष/ प्रभारी अधिकारी	मोबाइल	दूरभाष कार्यालय
1.	वाराणसी	डॉ. संजीत कुमार	9837839411	05542–248019
2.	बस्ती	डॉ. एस. एन. सिंह	9450547719	05498–258201
3.	बलिया	डॉ. रवि प्रकाश मौर्य	9453148303	–
4.	फैजाबाद	डॉ. शशिकान्त यादव	9415188020	05278–254522
5.	मऊ	डॉ. एस. एन. सिंह चौहान	–	0547–2536240
6.	चंदौली	डॉ. एस. पी. सिंह	9458362153	0541–2260595
7.	बहराइच	डॉ. एम. पी. सिंह	9415172725	05252–236650
8.	गोरखपुर	डॉ. सतीश कुमार तोमर	9415155818	–
9.	आज़मगढ़	डॉ. के. एम. सिंह	9307015439	–
10.	बाराबंकी	डॉ. शैलेश कुमार सिंह	9455501727	
11.	महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
12.	जौनपुर	डॉ. सुरेश कुमार कनौजिया	9984369526	–
13.	सिद्धार्थनगर	डॉ. एल. सी. वर्मा	7376163318	05541–241047
14.	सोनभद्र	डॉ. पी. के. सिंह	9415450175	–
15.	बलरामपुर	डॉ. वी. पी. सिंह	9839420165	–
16.	अम्बेडकरनगर	डॉ. रामजीत	9918622745	–
17.	संतकबीरनगर	डॉ. अरविन्द सिंह	9415039117	–
18.	अमेठी	डॉ. रतन कुमार आनन्द	9838952621	–
19.	बहराइच (नानपारा)	डॉ. विनायक शाही	8755011086	–
20.	मनकापुर–गोण्डा	डॉ. ओम प्रकाश	9452489954	–
21.	बरासिन–सुल्तानपुर	डॉ. एस. के. वर्मा	9450885913	–
22.	अमहित–जौनपुर	डॉ. नरेन्द्र रघुवंशी	–	–
23.	गाजीपुर	डॉ. आर. सी. वर्मा	9411320383	–

विश्वविद्यालय के कृषि ज्ञान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि विज्ञान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	अमेठी	डॉ. शशांक शेखर सिंह	–	–
2.	गोण्डा	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–
3.	देवरिया	श्रीमती सरिता श्रीवास्तव	9415419712	–
4.	गाजीपुर	डॉ. ए. पी. राव	9415720376	–

विश्वविद्यालय के अनुसंधान केन्द्र

क्र.सं.	कृषि अनुसंधान केन्द्र	प्रभारी अधिकारी/	मोबाइल	दूरभाषा कार्यालय
1.	मसौधा, फैजाबाद	डॉ. डी. के. द्विवेदी	7706884188	05278–254153
2.	तिसुही, मिर्जापुर	डॉ. एस. के. सिंह	9450164714	05442–284263
3.	बसुली, महाराजगंज	डॉ. डी. पी. सिंह	9451430507	–
4.	घाघरा घाट, बहराइच	डॉ. तेजेन्द्र कुमार	9415560503	0525–235205
5.	बड़ा बाग, गाजीपुर	डॉ. सी. पी. सिंह	9628631637	–
6.	बहराइच	डॉ. गजेन्द्र सिंह	7379576412	0548–223690

प्रो. ए. पी. राव
निदेशक प्रसार

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या-224 229 (उ.प्र.), भारत
टेलीफैक्स : 05270-262821
फैक्स : 05270-262821

सम्पादकीय

किसान भाईयों पत्रिका का यह अंक विशेष रूप से वर्षा ऋतु में विभिन्न पद्धतियों से खरीफ फसलों के उत्पादन के तकनीकी ज्ञान पर आधारित है। कृषि वानिकी से लेकर दलहन उत्पादन तक तथा धान उत्पादन की न्यूनतम लागत तकनीकी से संबंधित लेख प्रस्तुत अंक में प्रकाशित किये गये हैं। कृषि में न्यूनतम लागत के साथ अधिकतम उत्पादन व बेहतर आय प्राप्त करने की तकनीकें हमारे किसान भाईयों तक पहुँचे ऐसा हमारा प्रयास है। यह अंक आप सबके लिए उपरोक्त दृष्टिकोण से उपयोगी सिद्ध होगा।

पूर्वांचल खेती के इस अंक में कृषि वानिकी, वर्षा ऋतु में हरा चारा उत्पादन, मोटे अनाजों, दलहन, खरीफ प्याज की खरीफ में वैज्ञानिक खेती, धान बुवाई की नवीनतम तकनीकों, समेत विभिन्न फसलों के प्रबन्धन से जुड़ी जानकारियों के लेख प्रकाशित किये गये हैं। आशा है हमारे किसान भाई इनका लाभ लेकर अपनी आय में वृद्धि सुनिश्चित कर पायेंगे।

(ए.पी. राव)

कृषि वानिकी : एक टिकाऊ कृषि पद्धति

आर0के0 आनन्द* एवं रणधीर नायक**

बढ़ते पर्यावरण असंतुलन एवं प्रदूषण के कारण हमारे क्षेत्र तथा देश–प्रदेश के मौसम एवं जलवायु में काफी परिवर्तन हो रहा है, जिसका दुष्परिणाम असामयिक वर्षा, ओलावृष्टि, तूफान आदि के रूप में आज हमारे सामने है, ऐसी परिस्थिति में हमें ऐसी तकनीकी एवं कृषि पद्धति को अपनाना होगा जिससे कि प्रतिकूल मौसम एवं जलवायु में भी हम अपने खेत से टिकाऊ उत्पादन प्राप्त कर सके तथा प्रदूषण एवं वैश्विक तापमान वृद्धि को कम करके बढ़ते पर्यावरण असंतुलन को रोक सके। इस दिशा में कृषि वानिकी एक ऐसी कृषि पद्धति है जिसको अपनाकर हम प्राकृतिक संसाधनों को बिना नुकसान पहुँचाये अपनी बढ़ती आबादी के लिए पर्याप्त खाद्यान्न, फल, फूल, ईंधन एवं लकड़ी तथा पशुओं के लिए चारा उपलब्ध करा सकते हैं। यह पद्धति पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में विशेष रूप से कारगर सिद्ध हो सकती है, इसलिए ऐसी तकनीकी को अपनाकर कृषक अपने जीविकोपार्जन को सुरक्षित करने के साथ साथ पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में मदद कर सकते हैं। कृषिवानिकी तथा उससे सम्बन्धित महत्वपूर्ण जानकारियां निम्नवत् हैः–

कृषिवानिकी एक ऐसी पद्धति है जिसमें एक इकाई भूखण्ड में एक ही समय पर फसलों के साथ साथ वृक्षों एवं पशुपालन का समावेश होता है जिससे कि खाद्यान्न, फल, फूल, लकड़ी, ईंधन एवं पशुओं हेतु चारा प्राप्त होता है तथा खेत से सतत् उत्पादन प्राप्त होता रहता है।

कृषि वानिकी की आवश्यकता क्यों ?

कृषिवानिकी को कृषि प्रणाली में सम्मिलित करने के अनेक प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष कारण हैं जो निम्नवत् हैः–

- बढ़ती हुई जनसंख्या का दबाव
- खेती योग्य भूमि एवं जंगलों पर दबाव
- भविष्य में खाद्यान्न के अभाव की समस्या
- मौसम एवं जलवायु में परिवर्तन
- भूमि संरक्षण एवं बिगड़ता मृदा स्वास्थ्य
- फल, ईंधन, लकड़ी एवं चारे की उपलब्धता में कमी
- बढ़ता पर्यावरण असंतुलन

कृषि वानिकी से लाभ

कृषि वानिकी से कृषकों तथा समाज एवं पर्यावरण को कई प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभ है, जो निम्नवत् हैः–

(क) प्रत्यक्ष लाभ

1. एक ही भूखण्ड पर विभिन्न प्रकार की उपयोगी वस्तुओं जैसे– खाद्यान्न, फल–फूल, सब्जी, चारा, ईंधन, रेशा, गोंद, इमारती लकड़ी आदि का उत्पादन एक साथ प्राप्त किया जा सकता है। जिससे कृषक आर्थिक लाभ प्राप्त कर अपना जीविकोपार्जन सुनिश्चित कर सकते हैं।
2. कृषि वानिकी अपनाकर कृषक भाई वन आधारित उद्योगों को कच्चे माल की आपूर्ति करके अच्छा आर्थिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।
3. ग्रामीण परिवेश की दैनिक आवश्यकताओं जैसे जलाऊ एवं इमारती लकड़ी चारा आदि की पूर्ति इस पद्धति से हो सकती है।

(ख) अप्रत्यक्ष लाभ

1. कृषि वानिकी में वृक्षों की प्रमुखता के कारण सूक्ष्म जलवायु में सुधार होता है जिससे खाद्यान्न फसलों के उत्पादन हेतु अनुकूल वातावरण तैयार होता है।
2. वृक्षों के द्वारा पोषक तत्वों के चक्रीयकरण से खाद्यान्न फसलों को लाभ मिलता है क्योंकि वृक्ष अपनी गहरी जड़ों के माध्यम से मृदा के गहरे तल में उपलब्ध पोषक तत्वों को अवशोषित करते है जो पत्तियों एवं टहनियों के अपघटन के पश्चात फसलों को प्राप्त हो जाता है।
3. वृक्षो के कारण खेत में पानी का वाष्पोत्सर्जन कम हो जाता है, जिससे नमी ज्यादा अवधि तक संरक्षित हो सकती है।

*कृषि विज्ञान केन्द्र, कठौरा, अमेठी, **कृषि विज्ञान केंद्र, कोटवा, आजमगढ़

4. कृषि वानिकी में वृक्षों के कारण भूमि में जैविक पदार्थो की मात्रा बढ़ती है तथा मृदा स्वास्थ्य में सुधार होता है एवं मृदा की उर्वरता बढ़ती है।
5. वृक्षों की उपस्थिति के कारण कृषि वानिकी से भूमि की रासायनिक एवं भौतिक संरचना में सुधार होता है।
6. वृक्ष भू–क्षरण को रोकते हैं।
7. कृषि वानिकी में वृक्षों की उपस्थिति वायु वृत्ति (वायु अवरोधक) का कार्य करती है। वृक्ष की पत्तियां गर्म एवं तेज हवाओं को रोकने व कम करने में बहुत सहायक सिद्ध होती हैं, जिससे साथ में उगायी जाने वाली फसलें हवा के प्रकोप से बच जाती हैं।
8. कृषि वानिकी के कारण भूमि का तापमान कम रहता है। जिससे भूमि के अन्दर पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं को नष्ट होने से बचाया जा सकता है, जो हमारी फसलों के उत्पादन में लाभदायक सिद्ध हो सकता है।
9. यदि प्रकृति के प्रकोपों जैसे आंधी, तूफान, ओला वृष्टि, अकाल एवं सूखे से खाद्यान्न नष्ट हो जाता है तो कृषि वानिकी पद्धति में वृक्ष से कुछ न कुछ उत्पादन अवश्य मिल जाता है।
10. खेत में लगे वृक्ष चिड़ियों तथा अन्य मित्र जन्तुओं हेतु निवास स्थान का कार्य करते है, जिससे ये जन्तु फसलों में लगे हुए कीड़ों को खाकर के फसलों में जैविक कीट नियंत्रण का कार्य करते है।
11. कृषिवानिकी के अन्तर्गत वृक्षों की उपस्थिति पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में मददगार सिद्ध होती है जिससे जलवायु परिवर्तन को कम किया जा सकता है। वृक्ष वातावरण में उपस्थित हानिकारक ग्रीन हाउस गैस कार्बनडाई आक्साइड को अवशोषित कर हमारे लिए प्राणवायु आक्सीजन प्रदान करते हैं।
12. झील एवं अन्य जल संग्रहणीय क्षेत्रों के आस पास वृक्ष होने से उसमें पानी का वाष्पीकरण कम हो जाता है जिससे मत्स्य पालन में फायदा होता है तथा जल ज्यादा दिनों तक संरक्षित रहता है।
13. कृषि वानिकी पद्धति में मधुमक्खी (मौन) पालन रेशम पालन तथा लाख कीट पालन आसानी से किया जा सकता है।
14. कृषि वानिकी से उपरोक्त प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष लाभों के अतिरिक्त अन्य सामाजिक लाभ भी है जैसे–

- खेत से अच्छा आर्थिक लाभ मिलने के कारण रहन सहन तथा जीविकोपार्जन में सुधार होता है।
- इस पद्धति में कई तरह के वृक्ष, एवं फसलों की उपस्थिति से कृषक परिवारों के पोषण एवं स्वास्थ्य में सुधार होता है।

कृषि वानिकी से सम्भावित हानियां–

1. फसल एवं वृक्ष के बीज पोषक तत्वों, जल, तथा सूर्य के प्रकाश हेतु प्रतिस्पर्धा होती है जिससे फसल उत्पादन कुछ हद तक प्रभावित हो जाता है लेकिन यदि हम वृक्ष से होने वाले उत्पादन को भी जोड़े दे तो खेत से प्राप्त होने वाले सकल उत्पादन में वृद्धि होती है।
2. वृक्षों से फल की तुड़ाई एवं उसकी कटाई एवं छटाई के दौरान फसल प्रभावित होने की सम्भावना रहती है।
3. इस पद्धति में वृक्ष से उत्पादन प्रारम्भ होने में कई वर्ष लग जाते है जिससे कि कृषक भाई मायूस होने लगते है।
4. इस पद्धति में बड़े कृषि यंत्रों को चलाना मुश्किल होता है।
5. इस पद्धति में कृषिकरण हेतु ज्यादा ज्ञान एवं अनुभव की जरूरत होती है।

अतः कृषिवानिकी से होने वाले लाभ एवं हानियों को देखते हुए हमें ऐसी कृषि वानिकी तकनीकी/प्रणाली अपनाना होगा जिससे कि फसल तथा वृक्ष का एक दूसरे पर कम से कम प्रभाव पड़े एवं अधिक दिन तक खेत से अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सके। इस हेतु कुछ बिन्दु निम्नवत् है जिनको दृष्टिगत रखते हुए यदि कृषि वानिकी को अपनाया जाये तो ज्यादा लाभ प्राप्त होगा।

(क)उचित फसल का चुनाव–

1. कृषि वानिकी के अन्तर्गत हमें ऐसी फसलों का चुनाव करना चाहिए जो कि वृक्षों के साथ उगने में

सक्षम हों तथा फसलों में अपनायी जाने वाली शस्य क्रियाओं का वृक्ष की वृद्धि, फूल आने तथा फलत पर प्रभाव न पडे। जैसे यदि हम आंवला के साथ धान की खेती करते है तो धान हेतु अधिक पानी देने से आंवला का वृक्ष प्रभावित हो सकता है, ऐसी स्थिति में हमें आंवले के साथ कम पानी चाहने वाली फसलें जैसे चना, मटर, मसूर, तिल, सरसों आदि उगाना चाहिये।

2. जब वृक्षों की छाया बहुत ज्यादा हो जाये तो हमें वृक्ष के साथ छायाप्रिय फसलें जैसे– हल्दी, अदरख, सूरन आदि ही उगाना चाहिये।
3. कृषि वानिकी के अन्तर्गत उगायी जाने वाली फसलें/प्रजातियां क्षेत्र की मिट्टी तथा मौसम एवं जलवायु के उपयुक्त होना चाहिये।

(ख) उचित वृक्षों का चुनाव–

1. कृषि वानिकी के अन्तर्गत उन्हीं वृक्षों का चुनाव किया जाना चाहिये जो क्षेत्र की मृदा तथा मौसम एवं जलवायु के उपयुक्त हों। जैसे शुष्क स्थानों पर कभी भी अधिक पानी सोखने वाले वृक्ष नहीं लगाना चाहिये।
2. हमेशा ऐसे वृक्षों का चुनाव करें जिनके साथ ऐच्छिक फसलें उगाने में कम परेशानी का सामना करना पड़े जैसे– छाया बर्दास्त न कर पाने वाली फसलों के साथ हमेशा कम बितान (फैलाव) वाले वृक्ष ही लगाये। वृक्षों का आकार तथा शाखायें ऐसी हो जिससे फसलों में कृषि कार्य जुताई, गुड़ाई, कटाई आदि कम से कम प्रभावित हो।
3. कृषि वानिकी पद्धति में कभी भी ऐसे वृक्षों का रोपण नहीं करना चाहिए जिनकी पत्तियां एवं टहनियां जमीन पर गिरने के बाद मृदा में हानिकारक रसायन (एलीलो केमिकल) छोड़ते हों जिससे फसल के अंकुरण तथा वृद्धि प्रभावित हो।
4. कृषि वानिकी हेतु बहुउद्देशीय वृक्षों का चयन ज्यादा उचित होता है।
5. ऐसे वृक्षों का चयन ज्यादा अच्छा होता है जिनके पतझड़ (पत्ती गिरना), पत्ती आने तथा फल फूल आने का समय फसल की वृद्धि एवं उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव डालता है।

उपयुक्त कृषिवानिकी पद्धतियाँ–

उत्तर प्रदेश का विन्ध्य क्षेत्र प्राचीन काल से ही वन सम्पदा का धनी क्षेत्र रहा है यहाँ पर वन आच्छादन अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक है, जिसके कारण ही इस क्षेत्र के कृषकों द्वारा बहुत पहले से ही पारम्परिक रूप में विभिन्न प्रकार के वृक्षों को खेतों में लगाया जाता रहा है जिसमें महुआ एक प्रमुख वृक्ष है, परन्तु अब कृषकों द्वारा पारम्परिक कृषिवानिकी का त्याग किया जा रहा है। ऐसी परिस्थिति तथा वर्तमान पर्यावरणीय समस्या को देखते हुए आवश्यकता है कि इस क्षेत्र में वैज्ञानिक तरीके से कृषि वानिकी पद्धतियों को अपनाया जाये जिससे कि कृषकों को अधिक लाभ हो सके। इसलिए विन्ध्य क्षेत्र के लिए उपयुक्त कुछ प्रमुख कृषि वानिकी पद्धतियां निम्नवत् हैः–

1.कृषिवन पद्धति–

इस पद्धति के अन्तर्गत वन (इमारती लकड़ी) वृक्षों के साथ फसलों का समायोजन किया जाता है। इस पद्धति में कृषि फसलों के साथ वृक्षों को क्रमबद्ध तरीके से उगाने से भूमि प्रयोग के साथ खाद्यान्न लकड़ी, चारा तथा ईंधन आदि का उत्पादन होता है। इस पद्धति हेतु उपयुक्त वन वृक्ष एवं उनके साथ उगायी जाने वाली फसलें निम्नवत् हैः–

वृक्ष

सागौन, शीशम, महोगनी, क्लोनल यूकेलिप्टस, सहजन, गमार, नीम, सीरिस, बबूल, बांस, महुआ, पलास, आसन धौ, करधई आदि।

फसलें

गेहूँ, जौ, तिल, सरसों, अलसी, चना, मटर, मसूर, अरहर, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि।

2 कृषि उद्यान पद्धति–

यह फल वृक्ष आधारित कृषि वानिकी पद्धति है जिसमें फलदार वृक्षों के साथ कृषि फसलों, सब्जियों तथा औषधीय पौधों को लगाते हैं। इस पद्धति से खाद्यान्न के साथ साथ विभिन्न प्रकार के फल एवं सब्जियां प्राप्त होती है, जिससे आय में वृद्धि होती है। इस पद्धति से त्वरित लाभ हो जाता है तथा दोनों घटकों (वृक्ष एवं फसल) से निरनतर उत्पादन प्राप्त होता रहता है। इस पद्धति के लिए उपयुक्त वृक्ष एवं फसल प्रजातियां निम्नवत् हैंः–

वृक्ष

आम, बेल, बेर, ऑवलां, अमरूद, चिरौंजी, करौंदा, इमली आदि

फसल

कम पानी चाहने वाली फसले जैसे तिल, सरसो, अलसी, जौ, गेहूँ, चना, मटर, मसूर आदि।

सब्जी

कम पानी चाहनें तथा हल्की छाया सहन करने वाली सब्जी फसलें तथा हल्दी, अदरख, सूरन आदि।

औषधीय पौधे

सतावर, सर्पगंधा, अश्वगंधा, कालमेघ, सफेद मूसली आदि।

3 वन चारागाह पद्धति

यह एक चारा वृक्ष आधारित कृषि वानिकी पद्धति है जिसमें ईंधन व चारा देने वाले वृक्षों की पंक्तियों के बीच में घास, चारा फसलें या दोनों के मिश्रण को लगाते हैं। यह पद्धति खराब (क्षीण), बंजर, उबड़–खाबड़ व समस्याग्रस्त भूमि में ईंधन, चारा व लकड़ी प्राप्त करने के लिए उपयुक्त है। इस पद्धति के लिए उपयुक्त प्रमुख वृक्ष एवं घास तथा चारा प्रजातियां निम्नवत् हैः–

वृक्ष

बॉस, शीशम, करधई, धौ, सुबबूल, विलायती बबूल, अंजन बबूल, खैर, सीरिस, पाकड़ आदि।

घास

धवलू, लम्पा, सेन, अंजन घास, पैराघास, नैपियर घास, वनकुल्थी, सिराट्रो एवं स्टाइलो आदि।

उपरोक्त तीनों पद्धतियों के अतिरिक्त भी बहुत सी पद्धतियां हैं जो कि उक्त के आपस में संयोजन से बनी हैं जैसे कृषि–वन–उद्यान पद्धति, उद्यान–चारागाह पद्धति, कृषि–वन–चारागाह पद्धति, मत्स्य कृषि वानिकी, एवं गृह वाटिका इत्यादि। इन पद्धतियों को जलवायु, मृदा तथा अपनी आवश्यकतानुसार अपनाया जा सकता है।

उपरोक्त पद्धतियों में वृक्ष एक महत्वपूर्ण घटक है जो कि एक स्थाई घटक माना जाता है इसलिए वृक्ष प्रजातियों का चुनाव रोपण दूरी, रोपण के तरीके तथा साथ में उगायी जाने वाली फसलों आदि के बारे में गहनता से विचार करके ही कृषि वानिकी की स्थापना करना चाहिये। अतः कृषि वानिकी की विभिन्न पद्धतियों के अन्तर्गत वृक्षों एवं फसलों के संयोजन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है जिस हेतु प्रमुख बिन्दु निम्नवत् हैः–

1. यदि किसी पद्धति में फसल उत्पादन ही प्रमुख हो तो वृक्षों को खेत की मेड़ों पर लगाया जाना चाहिये।
2. यदि अपनाई जाने वाली पद्धति से फसल उत्पादन तथा लकड़ी एंव ईंधन उत्पादन दोनो प्रमुख हो तो वृक्षों को खेत में निश्चित दूरी पर कतार में लगाना चाहिये तथा वृक्ष की कतारों के बीच में फसल उत्पादन करना चाहिये।
3. यदि कृषक भाईयों को कृषिवानिकी पद्धति से बहुत जल्दी लाभ प्राप्त करने की आवश्यकता हो तो वे कृषि उद्यान पद्धति को अपनाकर रोपण के 3–4 वर्षो के बाद से ही लाभ प्राप्त कर सकते है।
4. फल वृक्षों को पूरे खेत में लाइनों में एक निश्चित दूरी पर रोपित करना ज्यादा लाभप्रद होता है।
5. कृषि वानिकी पद्धति में वृक्ष की छाया से फसलों पर पड़ने वाले नुकसान को कम करने हेतु समय–समय पर वृक्षों में कटाई छटाई अवश्य करना चाहिये, तथा ज्यादा दिनों तक फसलों के अच्छे उत्पादन हेतु वृक्षों की लाइनों के बीच की दूरी को बढ़ा देना ज्यादा अच्छा रहता है।
6. फसलों पर वृक्ष की छाया के प्रभाव को कम करने हेतु मेड़ पर रोपण की दशा में दक्षिण तरफ की मेड़ पर वृक्षों का रोपण नहीं करना चाहिये। यदि वृक्षों को लाइनों में पूरे खेत में स्थापित करना हो तो वृक्षों को लाइनों में उत्तर–दक्षिण दिशा में रोपित करना चाहिये। तथा लाइन से लाइन की दूरी बढ़ा कर वृक्ष से वृक्ष की दूरी कम कर दें इस तरह से अधिकतर समय वृक्ष की छाया वृक्ष पर पड़ेगी तथा फसलों का कम नुकसान होगा।
7. कृषि वानिकी स्थापना के प्रारम्भिक वर्षों में जब वृक्षों की उंचाई कम रहती है तब तक लम्बी फसलें

(शेष पृष्ठ 10 पर)

खरीफ में मोटे अनाजों की वैज्ञानिक खेती

*अखिलेश कुमार यादव, **के. एम. सिंह, ***आर. के. सिंह एवं ****आर. के. आनन्द

हरित क्रांति से पहले अपने देश में मोटे अनाजों की खेती बहुतायत होती थी। उस समय भारत की कृषि उत्पादन प्रणाली में काफी विभिन्नता देखने को मिलती थी। तत्समय धान, गेहूं , मक्का, ज्वार, बाजरा, सावाँ, कोदो, काकुन, मडुआ, चीना, एवं राई इत्यादि फसलों की खेती की जाती थी। लेकिन वर्तमान में स्थिति यह है कि देश की बदली कृषि नीति ने भारतीयों को धान – गेहूँ फसल पद्धति पर ही निर्भर बना दिया है। यहाँ यह भी कहना सही होगा कि उस समय देश खाद्यान्न सुरक्षा में आत्म निर्भर नहीं था और हरित क्रान्ति के बाद देश की कृषि में अमूल चूल परिवर्तन देखने को मिला और हर व्यक्ति को भोजन मिलना सुनिश्चित हुआ। खाद्यान्न सुरक्षा में हम आत्मनिर्भर हो गए, लेकिन मोटे आनाज की खेती का क्षेत्रफल धीरे–धीरे घटता चला गया। जो कि व्यक्ति के स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से अच्छा नहीं रहा। इसके अलावा बाजारों मे भी मोटे अनाजों का कम महत्व भी इसकी खेती करने वाले लोगों का मोहभंग का कारण बना।

मोटा अनाज इसलिए कहा जाता है क्योंकि इनके उत्पादन में ज्यादा लागत और मेहनत की जरुरत नहीं पड़ती और ये आनाज 50–100 सेमी. की वर्षा वाले स्थानों एवं कम उपजाऊ जमीन पर भी इनकी खेती की जा सकती है। अन्य फसलों के उत्पादन की तुलना में इसमें कम रासायनिक उर्वरक एवं कम सिचाईं की आवश्यकता पड़ती है। बदलते हुए मौसम के परिवेश में खाद्यान्न सुरक्षा के लिए खतरा बढ़ रहा है क्योंकि वर्तमान में उगाई जा रही फसलें जलवायु परिवर्तन के प्रति अधिक संवेदनशील हैं । इसीलिए जलवायु परिवर्तन के चलते खाद्य आपूर्ति की समस्या से निपटने में मोटे अनाज की खेती अच्छा विकल्प हो सकती हैं । धान – गेहूँ की तुलना में ज्वार, बाजरा, मक्का, सावाँ, कोदो, काकुन, मडुआ, एवं रागी की फसलें जलवायु परिवर्तन के प्रति कम संवेदनशील होती हैं। सिंचित तथा असिंचित क्षेत्रों में चावल की पैदावार बारिश के कम–ज्यादा होने से अधिक प्रभावित होती है। इन स्थानों पर चावल की जगह मोटे अनाजों को अधिक उगाने से जलवायु परिवर्तन जैसी परिस्थति में भी स्थायी खाद्य आपूर्ति बनाए रखने में मदद मिल सकती है, तथा स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से देखा जाए तो मोटे अनाजों में प्रोटीन, मिनरल्स, लिपिड्स, फाइबर. एवं विटामिन्स भरपूर मात्र में पाए जाते हैं।

सारिणी–1
मोटे अनाजों की उन्नतशील प्रजातियाँ

फसल	प्रमुख प्रजातियाँ
ज्वार	सी.एस.वी. 15, सी.एस.वी. 17, सी.एस.वी. 20, हाइब्रिड– सी.एस.एच. 18, सी.एस.एच. 25, सी.एस.एच. 27
बाजरा	जे.बी.वी.3, पी.सी. 383, आई.सी.एम.वी. 221, राज 171, हाइब्रिड– के.बी.एच. 108, जी.एच.बी. 905,
मक्का	गंगा 5, गंगा 11, सरताज, डेक्कन 107, प्रभात, नवजोत, कंचन, गौरव, पूसा कम्पोजिट–2, शक्ति –1 (क्यू.पी.एम.)
सावाँ	कंचन, वी.एल. 172, वी.एल. 207, अनुराग
कोदों	के.के. 2, जे.के. 13, जे.के. 65, जे.के. 98, टी.एन.ए.यू 86
काकुन	पी.आर.के. 1, पी.एस. 4, एस.आई.ए. 3088 एवं 3085, श्रीलक्ष्मी, एस.114, एस.आई.ए. 326,
मंडुआ	वी. एल. 376, वी. एल. 352, वी. एल. 146, के.एम. 13, के.एम. 65, जी.पी.यू. 67, सूरज
चीना	भावना, पी.आर.सी. 1, टी.एन.ए.यू. 145, 164, 151, नागार्जुन, सागर

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (जी.पी.बी.), **वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष ***वि.व.वि./सह प्राध्यापक (शस्य), कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटवा, आजमगढ़
****वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, के.वी.के., अमेठी (आचार्य न. दे. कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.)

सारिणी–2

बुवाई का समय, बीज दर, पंक्ति से पंक्ति एवं पौध से पौध की दूरी तथा उर्वरक की मात्रा

फसल	बुवाई का समय	बीज दर किग्रा./हे.	दूरी (सेमी.)	उर्वरक की मात्रा (किग्रा.) नत्रजन	फास्फोरस	पोटाश
ज्वार	जून से मध्य जुलाई	12–15	45x15	100–120	40	40
बाजरा	जून से मध्य जुलाई	4–5	45x10	100–120	40–50	30–40
मक्का	जून से मध्य जुलाई	20–25	60x20	80	40	40
सावाँ	मध्य जून से मध्य जुलाई	8–10	25x10	40	20	20
कोदों	मध्य जून से मध्य जुलाई	10–15	22.5x10	40	20	20
काकुन	मध्य जून से जुलाई	8–10	25x10	40	20	20
मंडुआ	मध्य मई से जून	10–12	20x10	40	20	20
चीना	मध्य जून से जुलाई	8–10	20x10	40	20	20

उत्पादन तकनीकः

भूमि एवं उसकी तैयारी

दोमट या बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए अच्छी मानी जाती है। खेत की तैयारी के लिए एक गहरी जुताई व दो हल्की जुताई करनी चाहिए।

सहफसली खेती

उपरोक्त मोटे अनाजों वाली फसलों को मिर्च, हल्दी, तम्बाकू एवं सब्जी की खेती के साथ सहफसल के रूप मे लगाया जा सकता है।

प्रमुख खरपतवार एवं प्रबन्धन

खरीफ की फसलों में उगने वाले सकरी पत्ती वाले खरपतवारों में मकरा, बनचरी, सेवई, डवरा, मोथा, कोदई व दूब आदि हैं। चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों में मकोय, चौलाई, कनकउआ, हुलहुल व चिलिमिली है।

आज जरुरत है, देश की फसल उत्पादन प्रणाली में मोटे आनाजों को शामिल करते हुए इनकी खेती को बढावा दिया जाये एवं मोटे अनाजों की खेती करने वालों को प्रोत्साहित भी किया जाये ताकि आने वाले समय में हर व्यक्ति को पोषण सुरक्षा मिल सके एवं फसल चक्र के द्वारा मृदा उर्वरता भी बनी रहे।

स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से मोटे अनाजों की विशेषताएं–

- मोटे अनाज ग्लूटेन फ्री होने के साथ–साथ सुपाच्य होते हैं।
- इनमें प्रोटीन, मिनरल्स. विटामिन्स, फाइबर, कैल्शियम एवं आयरन के साथ–साथ अन्य माइक्रो न्यूट्रियन्ट भी भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं।
- मोटे अनाजों के सेवन से शुगर, एसिडिटी, पेट की बीमारियों में राहत मिलती है।
- मोटे अनाज शरीर से विषैले तत्वों को बाहर निकालते हैं।
- इनके सेवन से ब्लड प्रेसर नियंत्रित होता है, एवं हृदय रोग की समस्या से भी बचा जा सकता है।
- शरीर में रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढाता है।
- मोटे अनाजों में नियासिन (विटामिन बी3) पर्याप्त मात्रा में जाने के कारण शरीर में कोलेस्ट्राल के स्तर को कम करने मे मदद करता है। ●

सारिणी– 3

मोटे अनाज की फसलों मे प्रयोग होने वाले प्रमुख खरपतवारनाशी

फसल	खरपतवारनाशी	व्यवसायिक नाम	मात्रा (किग्रा./हे.)
ज्वार	एट्राजीन	एट्राट्राफ	0.5–1.0
बाजरा	एट्राजीन	एट्राट्राफ	0.5–1.0
मक्का	एट्राजीन,	एट्राट्राफ,	1.0–1.25
	सिमाजीन	टेफाजीन	1.0–1.25
सावाँ	2, 4–D सोडियम साल्ट (80%)	वीडर	0.75–1.0
कोदों	2, 4–D सोडियम साल्ट (80%)	वीडर	0.75–1.0
काकुन	2, 4–D सोडियम साल्ट (80%)	वीडर	0.75–1.0
मंडुआ	2, 4–D सोडियम साल्ट (80%)	वीडर	0.75–1.0
चीना	2, 4–D सोडियम साल्ट (80%)	वीडर	0.75–1.0

वर्षा ऋतु में हरा चारा उत्पादन

एस. के. सिंह, एस. के. तोमर, विपुल सिंह एवं सुरेंद्र सिंह

हमारे गावों की 70 प्रतिशत आबादी पशुपालन व्यवसाय से जुड़ी है। विश्व की 15 प्रतिशत गोवंशीय जनसंख्या और 54 प्रतिशत भैंसो की संख्या भारत में मौजूद है, लेकिन हरे चारे का उत्पादन कुल जोत का केवल 4–6 प्रतिशत भूमि में ही किया जाता है। साठ के दशक से पशुओं की संख्या बढ़ने के बावजूद चारा उत्पादन क्षेत्रफल में कोई खास वृद्धि नहीं हुई है। वैसे 117 लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल में चरागाह भूमि है, जिसमे केवल 3–8 प्रतिशत स्थायी चरागाह है। परन्तु अधिकतर चरागाह भूमि अव्यवस्थित है। अनुमान के आधार पर हमारे देश में विभिन्न स्रोतों से प्राप्त शुष्क पदार्थ के आधार पर हरे चारे का उत्पादन 12.6 करोड़ टन है, जब कि हमे 19.3 करोड़ टन हरे चारे की आवश्यकता है। अतः 35 प्रतिशत हरे चारे की कमी है। इस अंतर को पाटने के लिए और खाद्यान्नों पर मानव व पशुओं की प्रतिस्पर्धा को कम करने के लिए वैज्ञानिक खेती के माध्यम से हरा चारा उत्पादन की आवश्यकता है।

हमारे देश के ग्रामीण अर्थव्यस्था में पशुपालन तथा दुग्ध उत्पादन एक प्रमुख उद्योग है। सस्ते दुग्ध उत्पादन के लिये पशुओं हेतु चारे की विशेष भूमिका है, और यह सत्य है, कि हरे चारे डेरी उद्योग की रीढ़ है, क्योंकि ये पशुओं के लिये सस्ते प्रोटीन व ऊर्जा के मुख्य स्रोत है। इस प्रकार पशुओं के उत्पादन एवं कार्यक्षमता बढ़ाने के लिये उत्तम चारे की फसलों का उत्पादन आवश्यक है। यह पशुओं के लिये स्वादिष्ट एवं पचनीय होता है। वर्षा ऋतु में हरे चारे की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु मुख्य रूप से ज्वार, मक्का, बाजरा, लोबिया और हाइब्रिड नेपियर घास का उत्पादन किया जा सकता है।

ज्वार

ज्वार खरीफ में चारे की मुख्य फसल है। देशी किस्मों में प्रोटीन कम होने से यह एक अपूर्ण निर्वाहक आहार माना जाता है, परन्तु उन्नतिशील किस्मों में 7–9 प्रतिशत तक प्रोटीन पायी जाती है जिससे ये किस्में निर्वाहक आहार हैं और चारे के रूप में ज्वार की खेती करना लाभदायक है।

भूमि

दोमट, बलुई दोमट तथा हल्की और औसत काली मिट्टी जिसका जल निकास अच्छा हो, ज्वार की खेती के लिए अच्छी है।

भूमि की तैयारी

एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताइयां देशी हल से करनी चाहिए।

उन्नत किस्में

मीठी ज्वार (रियो) पी०सी० 6 पी०सी० 9 यू०पी० चरी 1 व 2 पन्त चरी–3, एच०सी० 308 हरियाना चरी–171, पंत चरी–4।

बुवाई का समय

ज्वार की बुवाई जून मध्य जुलाई में कर देनी चाहिए। वर्षा न होने की दशा में बुवाई पलेवा करके करना चाहिए।

बीज की दर

छोटे बीजों वाली किस्मों जैसे (मीठी ज्वार) रियों का बीज 25–30 किग्रा० तथा दूसरी किस्मों का 30–40 किग्रा० प्रति हेक्टर रखना चाहिए। इसे फलीदार फसलें जैसे लोबिया के साथ 2 : 1 के अनुपात में बोना चाहिए।

बुवाई की विधि

बीज की बुवाई हल के पीछे 30 सेमी० की दूरी पर करें।

उर्वरक

उर्वरक का प्रयोग मिट्टी परीक्षण के आधार पर करना अच्छा रहता है। सामान्य तौर पर 80–100 किग्रा० नत्रजन तथा 40 किग्रा० फास्फोरस प्रति हेक्टर देने से चारे की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है। नत्रजन

एस.एम.एस., पशुपालन, वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, यंग प्रोफेशनल (निक्रा परियोजना), के. वी. के., बेलीपार, गोरखपुर और एस.एम.एस., पशुपालन, के. वी. के., हैदरगढ़, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, (उ. प्र.)– २२४२२९.

की आधी मात्रा तथा कुल फास्फोरस बुवाई के समय खेत में डालना चाहिए। शेष आधी मात्रा नत्रजन बुवाई के 25–30 दिन बाद टाप ड्रेसिंग में प्रयोग करना चाहिए। मिलवा फसल में 60 किग्रा० नत्रजन 40 किग्रा० फास्फेट का प्रयोग करें।

सिंचाई

जून में बुवाई करने पर सूखे की स्थिति में 1 या 2 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।

कटाई

फसल चारे के लिए 60–70 दिनों में कटाई योग्य हो जाती है। पौष्टिक चारा प्राप्त करने हेतु कटाई फूल आने पर करना चाहिए।

उपज

किस्मों के अनुसार हरे चारे की उपज लगभग 250–450 कुन्तल तक हो जाती है।

मक्का

मक्का की खेती चारा तथा दाना दोनों के लिए की जाती है। इसका चारा मुलायम होता है तथा पशु चाव से खाते है। यह एक निर्वाहक आहार है। इसमें फलीदार फसलों की खेती जैसे लोबिया के साथ 2:1 के अनुपात में की जानी चाहिए।

भूमि

अच्छे जल निकास वाली दोमट, बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त है।

भूमि की तैयारी

एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा एक या दो जुताइयां देशी हल से करके भूमि तैयार की जाती है।

उन्नत किस्में

प्रायः दाने वाली जातियां चारे के काम में लाई जाती हैं। संकर मक्का में प्रोटीन, गंगा–2, गंगा–5, गंगा–7 संकुल मक्का में किसान, अफ्रीकन टाल और विजय तथा देशी में टाइप–41 मुख्य किस्में हैं। संकर मक्का के बीज में उत्पादित बीज चारे की बुवाई में प्रयोग किया जा सकता है।

बुवाई का समय

जून या जुलाई में पहली वर्षा होने पर इसकी बुवाई करनी चाहिए।

बीज दर

40–50 किग्रा० प्रति हेक्टर बीज शुद्ध फसल की बुवाई के लिए पर्याप्त होता है। फलीदार चारे जैसे लोबिया के साथ 3:1 अनुपात के साथ मिलाकर बोना चाहिए।

बुवाई की विधि

बीज लाइनों में 30 सेमी० की दूरी पर बोना चाहिए।

उर्वरक

संकर तथा संकुल किस्मों में 80 से 100 किग्रा० तथा देशी किस्मों में 50–60 किग्रा० प्रति हे० की दर से नत्रजन की दो तिहाई मात्रा बुवाई के समय तथा शेष एक तिहाई बुवाई के 30 दिन बाद खेतों में डालना चाहिए ।

सिंचाई

वर्षाकाल में बुवाई करने पर सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

कटाई

प्रायः मादा मंजरियों के निकलने की अवस्था में फसल चारे के लिए काटनी चाहिए। यह अवस्था बुवाई के 65 से 75 दिन बाद आ जाती है।

उपज

हरे चारे की औसत उपज लगभग 250–300 कुन्तल प्रति हेक्टर होती है।

बाजरा

यह शीघ्रता से बढ़ने वाली रोग प्रतिरोधक तथा अधिक कल्ले फूटने वाली चारे की फसल है। शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों में इसकी बुवाई की जाती है। यह अकेले अथवा दलहनी फसलों जैसे लोबिया या ग्वार के साथ मिलाकर बोई जाती है।

भूमि

बलुई दोमट भूमि इसकी खेती के लिए अच्छी है। यह हल्की भूमि से भी भली प्रकार पैदा हो जाती है।

भूमि की तैयारी

2 या 3 जुताइयां देशी हल से करनी चाहिए।

उन्नत किस्में

चारे के लिए संकर बाजरा की द्वितीय पीढ़ी के बीज का प्रयोग करना चाहिए। जाइन्ट बाजरा, राजबो बाजरा,

राज बाजरा–2

बुवाई का समय

पहली वर्षा होने पर जुलाई माह में बुवाई करनी चाहिए।

बीज दर

शुद्ध फसल के लिए 12–15 किग्रा० बीज पर्याप्त होता है। मिलवां फसल में बाजरा तथा लोबिया तथा ग्वार 2:1 अनुपात में (2 लाइन बाजरा तथा एक लाइन लोबिया व ग्वार) बोना चाहिए, जिसके लिए 6–7 किग्रा० बाजरा तथा 12–15 किग्रा० लोबिया बीज की आवश्यकता पड़ती है।

बुवाई की विधि

छिटकवां, परन्तु मिलवां फसल में लाइनों में बुवाई करनी चाहिए।

उर्वरक

120 किग्रा० नत्रजन 40 किग्रा० फास्फेट प्रति हेक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा बुवाई के समय तथा शेष आधा भाग दो बार में बराबर–बराबर पहला 25–30 दिन तथा दूसरा भाग प्रथम कटाई के बाद नमी की दशा में डालना चाहिए।

सिंचाई

प्राय वर्षाकाल में बोई गयी फसलों को सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

कटाई

बाजरे की दो से तीन कटाइयां की जा सकती हैं। पहली कटाई बुवाई के 45–50 दिन बाद तथा फूल निकलने से पूर्व निकलते समय करना चाहिए।

उपज

हरे चारा की औसत उपज 400–500 कुन्तल प्रति हेक्टर हो जाती है।

लोबिया

इसका चारा अत्यन्त पौष्टिक होता है जिसमें 17 से 18 प्रतिशत प्रोटीन पाई जाती है। कैल्शियम तथा फास्फोरस भी पर्याप्त मात्रा में होता है। यह अकेले अथवा गैर दलहनी फसलों जैसे ज्वार या मक्का के साथ बोई जा सकती है।

भूमि

इसकी खेती दोमट या बलुई और हल्की काली मिट्टी में की जा सकती है। भूमि का जल निकास अच्छा होना चाहिए।

भूमि की तैयारी

एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 2–3 जुताइयां देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए।

उन्नत किस्में

रशियन जायन्ट, यू०पी०सी०–5286,5287, एन०पी०–3 (ई०सी०–4216) बुन्देल लोबिया–2 (आई०एफ०सी०–8401), बुन्देल लोबिया–2 (आई०एफ०सी०–8503), यू०पी०सी०–9202, यू०पी०सी०–4200, यू०पी०सी०–8705।

बीज उपचार

2.5 ग्राम थीरम प्रति किग्रा० बीज की दर से बीज उपचारित करना चाहिए। राइजोबियम कल्चर का भी प्रयोग करना उचित होगा।

बुवाई का समय

वर्षा प्रारम्भ होने पर जून–जुलाई के महीने में इसकी बुवाई करनी चाहिए।

बीज की दर

अकेले बोने के लिए प्रति हेक्टर 40 किग्रा० बीज पर्याप्त होता है। मक्का या ज्वार के साथ मिलाकर बुवाई के लिए 15–20 किग्रा० बीज प्रयोग करना चाहिए।

बुवाई की विधि

बीज की बुवाई हल के पीछे कूंड़ों में करना अच्छा रहता है। लाइन से लाइन की दूरी 30 सेमी० रखना चाहिए। मिलवां खेती में बुवाई अलग–अलग 2 : 1 के अनुपात के साथ लाइनों में करनी चाहिए।

उर्वरक

बुवाई के समय 15.20 किग्रा० नत्रजन तथा 50–60 किग्रा० फास्फोरस प्रति हेक्टर प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई

खरीफ में बोई गई फसल की सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। वर्षा न होने पर आवश्यकतानुसार

सिंचाई करनी चाहिए।

कटाई

फली बनने की अवस्था में फसल चारे की कटाई के योग्य हो जाती है। यह अवस्था बुवाई के 2 से ढाई माह बाद आती है।

उपज

प्रति हेक्टर 250–300 कुन्तल हरे चारे की उपज प्राप्त हो जाती है।

हाइब्रिड नेपियर

वर्षभर हरा चारा उपलब्ध कराने के लिए हाइब्रिड नेपियर की खेती किया जा सकता है। इसकी पत्तियॉ काफी मुलायम, लम्बी एवं हरी होती हैं। इसे बरसीम के साथ 6:6 अनुपात में भी सह–फसली के रूप में भी उगाया जा सकता है। हाइब्रिड नेपियर को किसान अपने प्रक्षेत्र के चारों ओर बाड़ (फेंसिंग) के रूप में उगा सकते हैं, जिससे उन्हें हरे चारे के साथ–साथ फसल सुरक्षा भी प्रदान हो जाती है।

प्रमुख प्रजातियाँ

पूसा जाइन्ट नेपियर, एन०बी०–5, एन०बी०–21, ई०बी०–4, गजराज, कोयम्बटूर एवं इगफ्री नेपियर।

भूमि का चुनाव

समस्याग्रस्त प्रक्षेत्र (ऊसर, अम्लीय, क्षारीय, मृदा, ऊॅची नीची जमीन इत्यादि क्षेत्र)

जड़ (स्लिप्स) की संख्या 25000 से 30000 प्रति हेक्टेयर। स्लिप्स लगाने का समय वर्षा ऋतु प्रारम्भ होने पर अथवा फरवरी का मध्य पखवारा।

लगाने की विधि

50–50 सेमी० की दूरी पर 6 से 9 इंच गहरा गड्ढा खोदकर इच्छित स्थान पर जगह–जगह लगा दें। उर्वरक 10 टन/हेक्टर गोबर की सड़ी खाद गड्ढों में भरे।

कटाई एवं उपज

संकर नेपियर घास की पहली कटाई 60–70 दिन पश्चात् तथा इसके बाद फसल की बढ़वार अनुसार 40–45 दिन (4–5 फीट ऊॅचाई होने पर) के अन्तराल पर भूमि की सतह से मिलाकर करनी चाहिये। वर्षभर में इसकी 6–7 कटाई से 2000–2500कु0/है0 तक हरे चारे की उपज प्राप्त होती है।●

(पृष्ठ 04 का शेष)

जैसे अरहर, मक्का, ज्वार, बाजरा आदि को नहीं उगाना चाहिए।

8. वृक्षों में भी कीट एवं रोग नियंत्रण के उपाय समय समय पर करते रहना चाहिये जिससे वृक्षों से अच्छा उत्पादन प्राप्त हो सके तथा फसलें संक्रमित होने से बच सके।
9. कृषि वानिकी के तहत उगायी जानी वाली फसलों में दी जाने वाली उर्वरक की मात्रा फसल प्रजाति एवं वृक्ष के अनुरूप निर्धारित करना चाहिए।
10. बहुत पुराने हो चुके वृक्षों से यदि उत्पादन कम हो रहा हो तथा फसलों पर ज्यादा प्रभाव पड़ रहा हो तो उन वृक्षों का पुनरोद्धार (रीज्यूवीनेशन) कर देना चाहिये।

इस प्रकार यदि किसान भाई कृषिवानिकी को अपनाते है तो उन्हें अच्छा आर्थिक लाभ होगा तथा विपरीत मौसम की दशा में भी वृक्षों से कुछ न कुछ उत्पादन अवश्य मिलेगा। जिससे उन्हें पूर्ण निराशा नहीं होगी। इसके अतिरिक्त विलुप्त प्राय वृक्षों जैसे चिरौंजी युक्त कृषिवानिकी पद्धति को अपनाने से इस तरह के वृक्षों का संरक्षण होगा तथा वृक्ष भविष्य के लिए सुरक्षित हो सकेंगे। इस सबके के अतिरिक्त वर्तमान समय में पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने हेतु वृक्षारोपण महत्वपूर्ण है परन्तु भूमि की निरन्तर हो रही कमी के कारण, वृक्ष आच्छादन बढ़ाना सम्भव नहीं हो पा रहा है, ऐसी परिस्थिति में कृषि वानिकी एक ऐसी व्यावहारिक पद्धति है जिसके द्वारा हम वृक्ष का आच्छादन बढ़ा कर पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में मदद कर सकते हैं तथा अपने लिए फल, फूल, अन्न, चारा, ईंधन एवं लकड़ी का उत्पादन कर अपना जीविकोपार्जन सुनिश्चित कर सकते हैं।●

उर्द की उन्नत खेती

संजीतकुमार[1], नरेन्द्र प्रताप[2] एवं ए पी राव[2]

किसान भाईयों, उर्द भारत की एक प्रमुख दलहनी फसल है। उर्द की खेती जायद और खरीफ की फसल के रूप में जा सकती है। यह आहार के रूप में अत्यंत पौष्टिक होती है, जिसमे प्रोटीन 24 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट 60 प्रतिशत के साथ कैल्सियम व फास्फोरस का अच्छा स्रोत पाया जाता है। उर्द की खेती से भूमि को भी संरक्षण और उर्वरक व अन्य पोषक तत्वों की पूर्ति भी होती है। उर्द की फसल को किसान भाई मिटटी के लिए हरी खाद के रूप में भी प्रयोग कर सकते है।

जलवायु

उर्द उच्च तापक्रम सहन करने वाली उष्ण जलवायु की फसल है। इसी कारण जिन क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधा होती है वहाँ अनेक भागों में उगाया जाता है। इसकी अच्छी वृद्धि और विकास के लिए 25 से 35 डिग्री सेल्सियस तापमान आवश्यक है परन्तु यह 42 डिग्री सेल्सियस तापमान तक सहन कर लेती है। अधिक जलभराव वाले स्थानों में इसे नहीं उगाना चाहिए ।

भूमि

उर्द की खेती बलुई मिटटी से लेकर गहरी काली मिट्टी जिसका पी एच मान 6.5 से 7.8 तक में सफलतापूर्वक की जा सकती है। उर्द का अच्छा उत्पादन लेने के लिए खेत का समतल होना और खेत से जल निकास की उचित व्यवस्था का होना अति आवश्यक है।

उन्नत किस्में

नरेंद्र उर्द –1, आजाद उर्द –1, पंत उर्द –19 , पंत उर्द –35, पंत उर्द– 40, प्रसाद, वी बी एन– 5 टाइप –9, उत्तरा, के.यू. 300, मास– 414, एल बी जी– 402 आदि ।

खेत की तैयारी

खेत की अच्छी तैयारी अच्छे अंकुरण व फसल में एक समानता के लिए बहुत जरूरी है। भारी मिट्टी की तैयारी में अधिक जुताई की आवश्यकता होती है। सामान्यतः 2 से 3 जुताई करके खेत में पाटा चलाकर समतल बना लिया जाता है, तो खेत बुवाई के योग्य बन जाता है। ध्यान रहे कि जल निकास नाली की व्यवस्था अवश्य हो ।

बुवाई का समय व तरीका

मानसून के आगमन पर या जून के अंतिम सप्ताह में पर्याप्त वर्षा होने पर बुवाई करें। इसके लिए कतारों की दूरी 30 सेंटीमीटर और पौधों से पौधों की दूरी 10 सेंटीमीटर रखे एवं बीज 4 से 6 सेंटीमीटर की गहराई पर बोये। ग्रीष्म कालीन में फरवरी के तीसरे सप्ताह से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक बुवाई करे।

बीज की मात्रा

खरीफ में उर्द का बीज 12 से 15 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर और ग्रीष्मकालीन बीजदर 20 से 25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बोना चाहिये।

बीज शोधन

मिटटी और बीज जनित रोगों से बचाव के लिए 2 ग्राम थायरम और 1 गाम कार्बेन्डाजिम मिश्रण 2:1 प्रति किलोग्राम बीज या कार्बेन्डाजिम 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से शोधित करें, इसके बाद बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्लू एस से 7 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज के हिसाब से उपचारित करें। बीज शोधन कल्चर से उपचारित करने के 2 से 3 दिन पूर्व करना चाहिए ।

जैविक बीजोपचार

राइजोबियम कल्चर का एक पैकेट 250 ग्राम प्रति 10 किलोग्राम बीज के लिए पर्याप्त होता है । 50 ग्राम गुड़ या शक्कर को 1/2 लीटर जल में घोलकर उबालें व ठण्डा कर लें। ठण्डा हो जाने पर ही इस घोल में एक पैकेट राइजोबियम कल्चर मिला लें। बाल्टी में 10 किलोग्राम बीज डाल कर अच्छी तरह से मिला लें ताकि कल्चर के लेप सभी बीजों पर चिपक जाएं। उपचारित बीजों को 8 से 10 घंटे तक छाया में फैला

[1] वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, वाराणसी, [2] विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन, कृषि विज्ञान केन्द्र वाराणसी
[3] निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

देते हैं। उपचारित बीज को धूप में नहीं सुखाना चाहिए। बीज उपचार दोपहर में करें ताकि शाम को या दूसरे दिन बुआई की जा सके। कवकनाशी या कीटनाशी आदि का प्रयोग करने पर राइजोबियम कल्चर की दुगनी मात्रा का प्रयोग करना चाहिए और बीजोपचार कवकनाशी–कीटनाशी तथा राइजोबियम कल्चर के क्रम में ही करना चाहिए।

उर्वरक की मात्रा

एकल फसल के लिए 15 से 20 किलोग्राम नत्रजन, 40 से 50 किलोग्राम फास्फोरस, 30 से 40 किलोग्राम पोटाश, प्रति हेक्टेयर की दर से अन्तिम जुताई के समय खेत में मिला देना चाहिए। उर्वरकों की मात्रा मिटटी परीक्षण के आधार पर देना चाहिए। नाइट्रोजन और फॉस्फोरस की पूर्ति के लिए 100 किलोग्राम डी ए पी प्रति हेक्टेयर का प्रयोग कर सकते हैं। उर्वरकों को अन्तिम जुताई के समय ही बीज से 5 से 7 सेंटीमीटर की गहराई तथा 3 से 4 सेंटीमीटर साइड पर ही प्रयोग करना चाहिए। 1.5 से 2.0 किलोग्राम जिंक (7.5 से 10 किलोग्राम जिंक सल्फेट) प्रति हैक्टर की दर से प्रयोग करना चाहिए।

सिंचाई प्रबन्धन

आमतौर पर खरीफ की फसल को सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है । यदि वर्षा का अभाव हो तो एक सिंचाई फलियाँ बनते समय अवश्य कर देनी चाहिए । उर्द की फसल को जायद में 3 से 4 सिंचाई की आवश्यकता होती है । प्रथम सिंचाई पलेवा के रूप में और अन्य सिंचाई15 से 20 दिन के अन्तराल में फसल की आवश्यकतानुसार करना चाहिए। पुष्पावस्था तथा दाने बनते समय खेत में उचित नमी होना अति आवश्यक है ।

खरपतवार नियंत्रण

बुआई के 25 से 30 दिन बाद तक खरपतवार फसल को अत्यधिक नुकसान पहुंचाते हैं । यदि खेत में खरपतवार अधिक हैं, तो 20 से 25 दिन बाद एक निराई कर देना चाहिए । जिन खेतों में खरपतवार गम्भीर समस्या हों वहां पर बुआई से एक दो दिन पश्चात पेन्डीमिथीलीन की 0.75 से 1.00 किलोग्राम सक्रिय मात्रा को 400 से 600 लीटर पानी में घोलकर एक हेक्टेयर में छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

कीट रोकथाम

पिस्सू भृंग (गैलेरूसिड भृग)

यह कीट सुबह के समय नये पौधों की पत्तियों पर छेद बनाते हुए उन्हें खाता है और दिन में मिटटी की दरारों में छिप जाता है। वर्षा ऋतु में इस कीट का गुबरैला जड़ की गाँठों में सुराग कर जड़ों में घुस जाता है एवं इनको पूरी तरह खोखला कर देता है। इस कीट के द्वारा जड़ की गाँठों के नष्ट होने पर उर्द के उत्पादन में 60 प्रतिशत तक हानि देखी गई है । यह मूंग मोजेक विषाणु रोग का भी वाहक है।

रोकथाम

मोनोक्रोटोफॉस 10 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज या डाईसल्फोटॉन 5 जी, 40 ग्राम प्रति किलो ग्राम बीज के हिसाब से बीजो को उपचारित करें। फोरेट 10 जी की 10 किलोग्राम या डाईसल्फोटॉन 5 जी 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से बुरकाव करना चाहिए ।

पत्ती मोड़क कीट

इल्लियां पत्तियों को ऊपरी सिरे से मध्य भाग की ओर मोड़ती हैं। यही इल्लियां कई पत्तियों को चिपका कर जाला भी बनाती हैं। इल्लियां इन्हीं मुड़े भागों के अन्दर रहकर पत्तियों के हरे पदार्थ क्लोरोफिल को खा जाती हैं, जिससे पत्तियां पीली सफेद पड़ने लगती है।

रोकथाम

क्विनालफॉस दवा की 30 मिलीलीटर मात्रा 15 लीटर पानी की दर से छिडकाव करें, आवश्यकता होने पर दूसरा छिड़काव पहले छिड़काव से 15 दिन बाद करें।

एफिड

निम्फ और व्यस्क कीट बड़ी संख्या में पौधो की पत्तियों, तनों, कली एवं फूल पर लिपटे रहते है और फूलों का रस चूसकर पौधों को हानि पहुँचाते हैं।

नियंत्रण

फसल को डायमिथिएट 30 ई सी, 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें।

सफेद मक्खी

दोनो ही पत्तियों की निचली सतह पर रहकर रस चूसते रहते हैं। जिससे पौधे कमजोर होकर सूखने लगते हैं। यह कीट अपनी लार से विषाणु पौधों पर पहुंचाता है और यलो मोजैक नामक बीमारी फैलाने का कार्य करता है।

नियंत्रण

पीले रोग ग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। फसल में डायमिथिएट 30 ई सी 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी के साथ घोल कर छिड़काव करें ।

रोग और रोकथाम

पीला चित्तेरी रोग

इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में चितकबरे धब्बे के रूप में पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं। बाद में धब्बे बड़े होकर पूरी पत्ती पर फैल जाते हैं, जिससे पत्तियों के साथ–साथ पूरा पौधा भी पीला पड़ जाता है। यह रोग विषाणु द्वारा मृदा, बीज तथा संस्पर्श द्वारा संचालित नहीं होता है। जबकि सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है।

रोकथाम

1. पीला चित्तेरी रोग में सफेद मक्खी के रोकथाम हेतु आक्सीडेमाटान मेथाइल 0.1 प्रतिशत या डाइमिथिएट 0.2 प्रतिशत प्रति हेक्टयर 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी और सल्फेक्स 3 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव 500 से 600 लीटर पानी में घोलकर 3 से 4 छिड़काव 15 दिन के अंतर पर करके रोग का प्रकोप कम किया जा सकता है ।
2. रोगरोधी किस्में जैसे– पंत उर्द– 19, पंत उर्द– 30, उत्तरा, नरेन्द्र उर्द– 1, उजाला, प्रताप उर्द– 1, इत्यादि उगाएं ।

झुर्सदार पत्ती रोग, मौजेक मोटल, पर्ण कुंचन रोग

यह भी विषाणु जनित रोग है। इस रोग के लक्षण बोने के चार सप्ताह बाद प्रकट होते हैं, तथा पौधे की तीसरी पत्ती पर दिखाई पड़ते हैं। पत्तियाँ सामान्य से अधिक वृद्धि तथा झुर्रियां या मड़ोरपन लिये हुये तथा खुरदरी हो जाती है।

रोकथाम

1. रोकथाम हेतु इमिडाक्लोरोप्रिड 70 डब्लू एस 5 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से बीजोपचार करें।
2. डाईमिथिएट 30 ई.सी, 2 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव रोगवाहक की रोकथाम के लिये करना चाहिए ।

चूर्णी कवक

इस बीमारी में सर्वप्रथम पत्तियों की ऊपरी सतह पर सफेद पाउडर जैसी वृद्धि दिखाई देती है, जो कवक के विषाणु एवं कवक जाल होते हैं। रोग की बढ़वार के साथ–साथ रोग के धब्बे भी बढ़ते जाते हैं, तथा वृत्ताकार हो जाते हैं और पत्तियों की निचली सतह पर भी फैल जाते हैं। रोग का तीव्र प्रकोप होने पर पत्तियों की दोनों सतह पर सफेद चूर्ण फैल जाने के कारण प्रकाश संश्लेषण की क्रिया प्रभावित होती है।

1. फसल पर घुलनशील गंधक 80 डब्ल यू पी, 3 ग्राम प्रति लीटर या कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू पी, 1 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
2. रोगरोधी किस्में जैसे– सी ओ बी जी–10, एल बी जी– 648, एल बी जी– 17, प्रभा, आई पी यू– 02–43, ए के यू– 15 और यू जी– 301 उगानी चाहिए ।

कटाई एवं मड़ाई

जब 70 से 80 प्रतिशत फलियां पक जाएं, हँसिया से कटाई आरम्भ कर देना चाहिए, तत्पश्चात बण्डल बनाकर फसल को खलिहान में ले आते हैं। 3 से 4 दिन सुखाने के पश्चात थ्रेसर द्वारा भूसा से दाना अलग कर लेते हैं।

पैदावार

उपरोक्त विधि से प्रबंधन की गई फसल से 12 से 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक दाने की पैदावार मिल जाती है।

भण्डारण

धूप में अच्छी तरह सुखाने के बाद जब दानों में नमी की मात्रा 8 से 9 प्रतिशत या कम रह जाये, तभी फसल को भण्डारित करना चाहिए।●

मूंग की उन्नत खेती

संजीतकुमार[1], नरेन्द्र प्रताप[2] एवं ए पी राव[2]

किसान भाईयों, मूंग को खरीफ, रबी व जायद तीनों मौसमों में आसानी से उगाया जा सकता है। उत्तरी भारत में इसे बारिश व गरमी के मौसम में उगाते हैं। ऐसे इलाके, जहां पर 60 से 75 सेंटीमीटर तक सालाना बारिश होती है, मूंग की खेती के लिए उपयुक्त हैं।

भूमि

सिंचित एवं असिंचित दोनों क्षेत्रों में इस की खेती आसानी से की जा सकती है। इस की सफलतापूर्वक खेती के लिए अच्छी जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी सब से अच्छी मानी जाती है।

मूंग की प्रजातियाँ

नरेंद्र मूंग 1, पंत मूंग 2, पंत मूंग 4, एच.यू.एम.6, सुनैना, जवाहर मूंग 45, जवाहर मूंग 70 आदि ।

बीज की मात्रा

गरमी के मौसम में मूंग के लिए बीज दर 20 किलोग्राम प्रति हेक्टयर रखनी चाहिए और बोआई कतारों में 20 से 25 सेंटीमीटर की दूरी पर करनी चाहिए। खरीफ मौसम में 12 से 15 किलोग्राम बीज प्रति हेक्टयर की दर से डालना फायदेमंद होगा और बोआई कतारों में 30 से 40 सेंटीमीटर की दूरी पर करनी चाहिए।

बोआई का समय व तरीका

जायद मूंग की बोआई, जहां सिंचाई की सुविधा हो वहां रबी फसलों की कटाई के तुरंत बाद कर देनी चाहिए। खरीफ मौसम में मूंग की बोआई मानसून आने पर जून के दूसरे पखवाडे से जुलाई के पहले पखवाडे के बीच करनी चाहिए। मूंग की बोआई कतारों में करनी चाहिए। 2 कतारों के बीच की दूरी 30 से 45 सेंटीमीटर रखनी चाहिए। बीजों को 4 से 5 सेंटीमीटर की गहराई पर बोना चाहिए। मूंग के बीजों को पहले कार्बेंडाजिम से उपचारित करने के बाद ही बोना चाहिए।

खेत की तैयारी

खेत में 1 बार मिट्टी पलटने वाले हल से जुताई कर के 2 से 3 बार कल्टीवेटर या देशी हल से जुताई करनी चाहिए और पाटा चला कर खेत को बराबर बना लेना चाहिए।

खाद व उर्वरक

मूंग दलहनी फसल है, इसलिए इस में ज्यादा नाइट्रोजन की जरूरत नहीं पड़ती है, फिर भी 20 किलोग्राम नाइट्रोजन, 50 किलोग्राम फास्फोरस व 20 किलोग्राम पोटाश की मात्रा प्रति हेक्टयर की दर से बोआई के समय देना फायदेमंद होगा। गंधक की कमी वाले क्षेत्रों में गंधकयुक्त उर्वरक 20 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर के हिसाब से देना चाहिए। सभी चारों तरह के उर्वरकों की पूरी मात्रा बोआई से पहले या बोआई के समय ही देनी चाहिए।

सिंचाई व जल निकास

खरीफ में मूंग की फसल को सिंचाई की जरूरत नहीं पड़ती है। अधिक बारिश की दशा में खेत से पानी निकालना बेहद जरूरी होता है। पानी न निकालने से पद्गलन रोग हो जाता है, जिससे फसल को भारी नुकसान होता है। गरमी में मूंग की फसल में खरीफ की तुलना में पानी की ज्यादा जरूरत होती है। गरमी के मौसम में 15 से 20 दिनों के अंतर पर 3 से 4 सिंचाई करनी चाहिए।

निराई–गुड़ाई व खरपतवार नियंत्रण

बोआई के 15 से 20 दिनों बाद पहली और 40 से 45 दिनों बाद दूसरी निराई करनी चाहिए। घास व चौड़ी पत्ती वाले खरपतवारों को रासायनिक विधि द्वारा खत्म करने के लिए फ्लूक्लोरिलिन 45 ईसी की 1.5 लीटर मात्रा/हेक्टयर 800 से 1000 लीटर पानी में घोल कर बोआई से पहले खेत में छिड़काव करें।

मूंग के कीट

काला लाही माहूं

नए पौधे से फली निकलने की दशा में इस कीट के शिशु व वयस्क पौधों की पत्तियों पर पाए जाते हैं। ये

[1] वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केंद्र, वाराणसी, [2] विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन, कृषि विज्ञान केन्द्र वाराणसी
[3] निदेशक प्रसार, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौ. वि. वि., कुमारगंज, अयोध्या

बसंतकालीन फसल की मुलायम टहनियों, फूलों व कच्ची फलियों से रस चूसते हैं।

रोकथाम

माहूं का प्रकोप होने पर पीले चिपचिपे ट्रैप का इस्तेमाल करें, ताकि माहूं ट्रैप पर चिपक कर मर जाएं। नीम का अर्क 5 प्रतिशत या 1.25 लीटर नीम का तेल 100 लीटर पानी में मिला कर छिड़कें। इस के बावजूद रोकथाम न हो तो मेटासिस्टाक्स 25 ईसी या डाइमेथोएट 30 ईसी या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल या थायोमेक्जाम 25 ईसी 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें।

हरा फुदका (जैसिड)

फसल की शुरुआती दशा से ले कर पौधों की पत्तियां व फलियां निकलने तक इस के शिशु व वयस्क हमला कर के रस चूसते हैं। रोगी पौधों की बढ़वार सामान्य से काफी कम हो जाती है।

रोकथाम

अकेली फसल के बजाय मिश्रित खेती करनी चाहिए। खासकर ज्यादा लंबाई वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार व सूरजमुखी वगैरह में से किसी एक को मूंग के साथ 6:1 या 6:2 के अनुपात में लगाना चाहिए। इस से रोशनी पसंद करने वाले हरा फुदका जैसे कीड़ों की संख्या पर बहुत हद तक नियंत्रण हो जाता है। इस के बाद भी रोकथाम न हो तो मेटासिस्टाक्स 25 ईसी या डाइमेथोएट 30 ईसी या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एसएल या थायोमेक्जाम 25 ईसी 1 मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़कें।

सफेद मक्खी

इस कीट के द्वारा फसल को कई तरह से नुकसान पहुंचाया जाता है। यह पौधों से रस चूसती है और पत्तियों पर स्रावित मधु छोड़ती है। द्रव पर काला चूर्णी फफूंदी (शूटी मोल्ड) के पनपने व फैलने से प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में रुकावट होती है और पीला चितकबरा रोग (पीला मोजैक) के विषाणु तेजी से फैलते हैं, रोगी फसल पूरी तरह से बरबाद हो जाती है।

रोकथाम

सफेद मक्खी से बचाव के लिए बोआई से 24 घंटे पहले डायमेथोएट 30 ईसी कीटनाशी रसायन से 8.0 मिलीलीटर प्रति किलोग्राम बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए। शुद्ध फसल के बजाय मिश्रित खेती करना ज्यादा लाभप्रद है। खासकर ज्यादा लंबाई वाली फसलों जैसे गन्ना, ज्वार व सूरजमुखी वगैरह में से किसी 1 को मूंग के साथ 6:1 या 6:2 अनुपात से लगाने से रोशनी पसंद करने वाले सफेद मक्खी जैसे कीड़ों की संख्या पर बहुत हद तक नियंत्रण हो पाता है।

पीला मोजैक रोग के विषाणु को फैलाने वाली सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए मिथाइल डेमीटान (मेटासिस्टाक्स) 25 ईसी का 625 मिलीलीटर या मैलाथियान 50 ईसी या डायमेथोएट 30 ईसी का 1 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से जरूरत के मुताबिक छिड़काव करना चाहिए।

थ्रिप्स

मूंग की फसल पर फूल की दशा में गरमी में मुलायम कलियों पर थ्रिप्स कीटों का हमला होता है। ये फूलों को बहुत नुकसान पहुंचाते हैं। मूंग की फलियों पर भी थ्रिप्स कीटों का प्रकोप होता है और उन में दाने विकसित नहीं हो पाते। सभी रस चूसक कीटों में थ्रिप्स सब से ज्यादा हानिकारक है।

रोकथाम

थ्रिप्स की रोकथाम करने के लिए फूल खिलने से पहले ही डायमेथोएट 30 ईसी या मैलाथियान 50 ईसी का 1 लीटर प्रति हेक्टेयर या मेटासिस्टाक्स 25 ईसी का 700 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

नीली तितली

फूल व फली की दशा में इस के पिल्लू मुलायम कलियों व फूलों पर हमला करते हैं। ये फलियों में छेद बना कर घुस जाते हैं व अंदर के ऊतक को खाते हैं। ये फलियों के अंदर विकसित हो रहे दानों को विशेष रूप से नुकसान पहुंचाते हैं।

रोकथाम

फली बेधक नीली तितली की रोकथाम के लिए निबौली (सूखा हुआ नीम बीज) के चूर्ण को पानी में घोल (5.0 प्रतिशत) कर फूल निकलने के साथ

छिड़काव करना चाहिए। यदि फली बेधक तितली की संख्या काफी अधिक हो जाए तो फली बनने की शुरुआती अवस्था में मैलाथियान 50 ईसी का 1.0 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

मूंग के रोग

पीली चितेरी रोग (येलो मोजेक)

मूंग का पीला चितेरी रोग विषाणु द्वारा पैदा होने वाला सब से खतरनाक रोग है। यह विषाणु बीज व छूने से फैलता है। पीली चितेरी रोग सफेद मक्खी (बेमिसिया टैबेसाई) जो एक रस चूसक कीट है के द्वारा फैलता है। रोग से प्रभावित पौधे देर से पनपते हैं। इन पौधों में फूल और फलियां स्वस्थ पौधों के मुकाबले बहुत ही कम लगती हैं।

रोकथाम

बोआई के लिए रोग रोधी व उन्नत प्रजातियों, नरेंद्र मूंग 1, पीडीएम 11, पूसा विशाल, एच.यू.एम. 6 आदि का चयन करें। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए मोनोक्रोटोफास (0. 04 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

झुर्रीदार पत्ती रोग (लीफ क्रिंकल)

यह रोग 'उर्द बीन लीफ क्रिंकल विषाणु' द्वारा होता है। रोग का फैलाव पौधे के रस (सैप) व बीज से होता है। यह खेत में लाही (माहूं) व अन्य कीटों द्वारा भी फैलता है। इस विषाणु के संक्रमण से फूल कलिकाओं में पराग कण बांझ हो जाते हैं, जिस से रोगी पौधों में फलियां कम लगती हैं।

रोकथाम

बोआई के लिए रोग रोधी व उन्नत प्रजातियों का चयन करना चाहिए। सफेद मक्खी की रोकथाम के लिए फसल पर मेटासिस्टाक्स या मैलाथियान या डामेथोएट या मोनोक्रोटोफास (0. 04 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

सर्कोस्पोरा पत्र टिक्का रोग

यह 'सर्कोस्पोरा' नामक प्रजातियों द्वारा होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों के रूप में प्रकट होते हैं। अनुकूल वातावरण में ये धब्बे बड़े आकार के हो जाते हैं। फूल आने व फलियां बनने के समय रोगी पत्तियां गिर जाती हैं। रोग पैदा करने वाले कवक बीज व रोग ग्रसित पौधों के मलवे पर भूमि में जीवित रहते हैं।

रोकथाम

बोआई से पहले बीजों को कवकनाशी कार्बाडेंजिम 2 ग्राम या थीरम 2–5 ग्राम से प्रति किलोग्राम की दर से उपचारित करना चाहिए। फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही कार्बेंडाजीम (0.1 प्रतिशत) कवकनाशी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णी फफूंदी रोग

यह रोग इरीसिफी पोलीगोनाई नामक कवक द्वारा होता है। गरम व सूखे वातावरण में यह रोग तेजी से फैलता है। इस रोग में पौधों की पत्तियों, तनों व फलियों पर सफेद चूर्णी धब्बे दिखाई देते हैं। रोग के ज्यादा होने से पत्तियां पूरी बनने से पहले सूख जाती हैं।

रोकथाम : फसल पर रोग के लक्षण दिखाई पड़ते ही कार्बेंडाजीम की 1 ग्राम या सल्फेक्स 3 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी की दर से घोल बना कर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई–मड़ाई

फसल की कटाई मूंग की किस्म पर निर्भर करती है। एक ही समय में पकने वाली प्रजाति में जब फसल 80 प्रतिशत तक पक जाती है, तो उसे जड़ से उखाड़ लेते हैं या काट लेते हैं, उस के बाद धूप में सुखा कर ट्रैक्टर चलाकर या लकड़ी के डंडे से पीटकर दाना अलग कर लेते हैं। सही समय पर फसल की गहाई के बाद दाना सुखाकर भंडारण करें।

उपज

मूंग की औसत उपज 8 से 10 क्विंटल प्रति हेक्टयर होती है। उन्नत खेती करने पर इस की पैदावार 12–15 क्विंटल प्रति हेक्टयर तक ली जा सकती है।●

वैज्ञानिक विधि से खरीफ में प्याज उत्पादन

एस.के.वर्मा*, समीक्षा* एवं गौरी शंकर वर्मा***

वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर किसान भाई खरीफ मौसम में प्याज का उत्पादन कर अपनी आय बढ़ा सकते हैं, चूँकि प्याज की माँग पूरे वर्ष भर बनी रहती है। जायद में उत्पादित प्याज बरसात में उचित भण्डारण न होने के कारण उसकी गुणवत्ता बरसात के बाद खराब हो जाती है तथा माह सितम्बर–अक्टूबर के बाद बाजार भाव कम हो जाता है, इसके विपरीत खरीफ प्याज की मॉग बाजार में बढ़ जाती है तथा किसान को उचित मूल्य प्राप्त होता है। सामान्यतः प्याज का उपयोग हम सलाद अचार एवं सब्जियों को बनाने में मसाले के रूप में प्रयोग करते है। साथ ही प्याज अनेक प्रकार के विटामिन, खनिज लवण एवं वसा होने के कारण औषधीय गुणों से भरपूर होता है।

भूमिः

बरसात में प्याज की खेती के लिए ऐसी भूमि का चयन करना चाहिए जिसमें कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा हो तथा जमीन बलुई, दोमट होने के साथ–2 उचित जल निकास की व्यवस्था हो तथा मृदा पी.एच.–7.5 से अधिक न हो।

प्रजातिः

निफांड–53

कंद हल्के बैंगनी रंग के जो बाद में लाल रंग के हो जाते है। यह किस्म रोपाई के 120–130 दिन में खुदाई योग्य तैयार हो जाती है। उत्पादन 150–200 कु0 प्रति हेक्टेयर है।

एग्रीफाउन्ड डार्करेड

यह किस्म 130–140 दिनों में पककर तैयार हो जाती है। कन्द गहरे लाल होते हैं। औसत पैदावार 200–250 कु0 प्रति हेक्टेयर है।

बुवाई का समय

बीज की बुवाई पूरे जून के महीने में की जाती है।

बीज की मात्रा

एक हेक्टेयर की रोपाई के लिए 8से 10 किलोग्राम बीज पर्याप्त रहता है।

पौध तैयार करनाः

बीज को ऊँची उठी हुई क्यारियों में बोया जाता है। क्यारियों की चौड़ाई 60 से 70 सेमी तथा लम्बाई सुविधानुसार रखते हैं। यद्यपि 3 मीटर लम्बी क्यारियॉ सुविधाजनक होती हैं। एक हेक्टेयर रोपाई के लिए लगभग 80 से 100 क्यारियॉ(3X1मीटर) पर्याप्त होती है। यदि रोग लगने की सम्भावना हो तो बीज तथा पौधशाला की मिट्टी को कवकनाशी जैसे थीरम या कैप्टान आदि से उपचारित करना चाहिए। 2–3 ग्राम दवा प्रति किलोग्राम बीज के लिए पर्याप्त होती है परन्तु भूमि उपचारित करने के लिए 4 से 5 ग्राम दवा प्रति वर्ग मीटर भूमि के लिए आवश्यकता होती है। बीज को 5–7 सेमी की दूरी पर कतारों में बोना चाहिए। बीज को बुवाई के बाद आधा सेमी तक सड़ी तथा छनी हुई गोबर की खाद और मिट्टी से पूर्णतया ढक देते है। इसके बाद फव्वारे से हल्की सिंचाई कर देते हैं फिर बीज को सूखी घास से ढक देते हैं। जब बीज अच्छी तरह अंकुरित हो जाये तो घास हटाकर क्यारियों में हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। पौध 6–7 सप्ताह में तैयार हो जाती है। शुरू में 2–3 सप्ताह तक पौध की सिंचाई फौब्बारे से करते हैं। फिर बाद में आवश्यकता हो तो नालियों के माध्यम से सिंचाई करते हैं। पौध को अधिक बरसात से बचाने के लिए ढकना चाहिए जैसे ही बरसात खत्म हो ढकना हटा देना चाहिए, क्योंकि यह देखा गया है कि अगर ढकना हटाया नहीं जाता तो फ्यूजेरियम का आक्रमण अधिक तापक्रम एवं नमी होने से अधिक होता है कभी–कभी तो 75 प्रतिशत पौध मरते देखे गये हैं।

पौध की रोपाई के लिए खेत की तैयारी

दो तीन जुताइयॉ करके खेत को अच्छी तरह समतल

*वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, **शोध छात्रा, ***(विषय वस्तु विशेषज्ञ) उद्यान, कृषि विज्ञान केन्द्र बरासिन, सुलतानपुर, आ.न.दे. कृषि एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

बनाकर क्यारियों एवं नालियों में बॉट देते हैं फिर 50 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर के हिसाब से क्यारियों में अच्छी तरह मिला देते है। रोपाई के दो दिन पूर्व 200 किग्रा कैल्शियम अमोनियम नाइट्रेट या 200 किग्रा यूरिया और 300 किग्रा सिंगल सुपर–फास्टफेट तथा 100 किग्रा पोटेशियम सल्फेट या म्यूरेट आफ पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से मिट्टी में मिलाकर फिर समतल बना देते हैं।

पौध की रोपाई

पौध को अगस्त के प्रथम पक्ष के बीच लगाते हैं। रोपाई करते समय कतारों की दूरी 15 सेमी तथा कतारों में पौधे से पौधे की दूरी 10 सेमी रखते हैं। रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करना अत्यन्त आवश्यक होता है नहीं तो 100 प्रतिशत हानि हो सकती है।

फसल की देखभाल

प्याज के पौधों की जड़ें अपेक्षाकृत कम गहराई तक जाती हैं। अतः अधिक गहराई तक गुड़ाई करनी चाहिए। अच्छी फसल के लिए 2–3 बार शुरू में खरपतवार निकालना आवश्यक होता है। खरपतवार नाशक दवा का भी प्रयोग किया जा सकता है। वैसालिन या स्टाम्प दवा 1 लीटर 800 लीटर पानी में मिलाकर खेत में रोपाई के समय छिड़काव करते हैं। खरपतवार नाशक दवा डालने के 40–50 दिनों बाद एक बार खरपतवार निकालना आवश्यक होता है। वैसे अगस्त से अक्टूबर के बीच में सिंचाई लगभग 8–10 दिनों के अन्तर पर बरसात न होने पर कर सकते हैं। यदि जमीन ज्यादा रेतीली है तो सिंचाई हर तीसरे दिन करते हैं। जिस समय गॉठे बढ़ रही हों उस समय सिंचाई जल्दी–जल्दी करते हैं। पानी की कमी से गॉठें अच्छी तरह से नहीं बढ़ पाती और इस तरह से पैदावार में कमी हो जाती है।

खड़ी फसल में खाद देना

रोपाई के चार सप्ताह बाद 200 किग्रा किसान खाद या 100 किग्रा यूरिया प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में छिटकवा विधि से मिला देते हैं। यदि किसान खाद का प्रयोग होता है तो खाद डालने के बाद सिंचाई करनी चाहिए परन्तु यूरिया का प्रयोग सिंचाई के बाद करते हैं। यूरिया डालने से पहले खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक होता है। यदि जमीन हल्की किस्म की है तो उपरोक्त खाद की मात्रा दो भागों में रोपाई के 20 और 45 दिनों के अन्तर पर देना चाहिए।

कीट एवं रोग नियंत्रण :

फसल को थ्रिप्स नामक कीड़े से बचाने के लिए मैलाथियान एक मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

पर्पल ब्लाच (बैंगनी धब्बा) तथा स्टेमफीलियम झुलसा रोग में बचाव के लिए डायथेन एम–45 नामक दवा 2 से 2.50 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर 10–15 दिनों के अन्तर पर छिड़काव करें। छिड़कने वाले घोल में चिपकने वाली दवा जैसे ट्राटोन या सैन्डोविट नामक दवा अवश्य मिलायें।

खुदाई एवं प्याज का सुखाना

फसल को तैयार होने में लगभग 5 माह लग जाते हैं क्योंकि गॉठें नवम्बर–दिसम्बर में तैयार होती हैं। जिस समय तापमान काफी कम होता है पौधे पूरी तरह से सूख नहीं पाते। इसलिये जैसे ही गॉठें अपने पूरे आकार की हो जायें एवं उनका रंग लाल हो जाये तो उन्हें पैरों से गिरा देना चाहिए और करीब 10 दिन खुदाई से पहले सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए। इससे गॉठें अच्छी आकार की होने पर भी खुदाई नहीं की जाती तो वे फटना शुरू कर देती हैं। खुदाई करके इनकों कतारों में रखकर खेत में सुखा देते हैं। पत्तों को गर्दन से 2.5 सेमी ऊपर से अलग कर देते हैं और फिर एक सप्ताह तक सुखा लेते हैं। सुखाते समय सड़े हुए कटे हुए दो गॉठों वाली, पाइप वाली एवं अन्य खराब किस्म की गॉठें निकाल देते हैं।

उपज

200–250 कुन्तल प्रति हेक्टेयर औसत उपज हो जाती है।●

पैडी ड्रम सीडर द्वारा धान की सीधी बुवाई

सौरभ वर्मा, बरूण कुमार एवं एस.के. वर्मा

उत्तर प्रदेश में धान खरीफ की मुख्य फसल है। धान की अनेक प्रजातियॉ पारिस्थितिकी के अनुसार शोध द्वारा विकसित की गई है। खेती में बढ़ती हुई लागत एक चिंता का विषय है। यही कारण है कि कृषकों को अधिक लाभ नहीं मिल पा रहा है। ग्रामीणों का शहरों की ओर पलायन एवं सरकारी योजनाएं जैसे मनरेगा, गावों में कृषि कार्यों में मानव श्रमों की कमी पैदा कर रहें है। बढ़ती हुई लागत एवं मानव श्रमिक की कमी को देखते हुए आज यह आवश्यक हो गया है कि ऐसी तकनीकों का विकास एवं प्रचार प्रसार किया जाय जिससे कृषि लागत में कमी आये तथा कम मानव श्रम से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके। ऐसी कुछ तकनीकों का विकास किया गया है, जैसे – धान की सीधी बुवाई जीरो टिल मशीन द्वारा, श्री पद्धति, पैडी ड्रम सीडर द्वारा बुवाई, लीफ कलर चार्ट द्वारा नत्रजन का प्रयोग, आदि।

धान की खेती में नर्सरी उगाना, हाथों से पौध की रोपाई करना तथा मजदूरों की कमी किसानों के लिए हमेशा से समस्या एवं लागत वृद्धि का कारण रही है। इन समस्याओं से निजात पाने, समय की बचत तथा फसल की लागत में कमी करने के लिए पैडी ड्रम सीडर से धान उत्पादन एक सही विकल्प के रुप में सामने आया है। इसमें लेव युक्त खेत में सीधी बुवाई की जाती है जिससे नर्सरी उगाने व रोपाई के खर्च में बचत होती है।

पैडी ड्रम सीडर एक मानव चालित कृषि यंत्र है जिसके माध्यम से अंकुरित धान के बीज की सीधी बुवाई की जाती है। यह एक सरल, सस्ती एवं समय की बचत करने की बेहतरीन तकनीक है। इसका प्रयोग करके किसान लाभ उठा सकता है, लेकिन इसके लिए खेत का बराबर होना व सिंचाई की सुविधा बहुत जरुरी है।

ड्रम सीडर से बुवाई के लाभः

- कम लागत और अधिक उपज एवं प्रति हेक्टेयर कम मानव श्रम की आवश्यकता
- धान की नर्सरी तैयार करने की आवश्यकता नहीं।
- हाथों द्वारा रोपाई न होने से मेहनत, समय व पैसों की बचत।
- पंक्ति में बुवाई होने से निराई वगैरह में आसानी।
- कम सिंचाई की जरुरत।
- छिटकवॉ विधि की तुलना में 15–30 प्रतिशत अधिक उपज की प्राप्ति।
- फसल का रोपाई किए धान से 10–15 दिन पूर्व परिपक्वन।
- फसल को सूखे से प्रभावित होने से बचाव।
- बीज व लागत में बचत।
- मशीन का इस्तेमाल, रख रखाव व एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाना आसान।

मशीन की संरचनाः

- पैडी ड्रम सीडर छः प्लास्टिक ड्रमों का बना हुआ यंत्र है। इन ड्रमों पर पास वाले छिद्र की संख्या 28 तथा दूर वाले छिद्र की संख्या 14 होती है।
- ड्रमों की लम्बाई 25 सेमी0 तथा व्यास 18 सेमी0 होती है। जमीन से ड्रमों की ऊॅचाई 18 सेमी0 तथा एक ड्रम में बीज रखने की क्षमता 1.5–2.0 किग्रा0 तक होती है।
- बीज गिराव सिस्टम गुरुत्वीय बल प्रणाली पर आधारित है।
- पहिये का व्यास 60 सेमी0 तथा चौड़ाई लगभग 6.0 सेमी0 है।
- बिना बीज के यंत्र का कुल भार 6.0 किग्रा0 होता है।
- इस यंत्र से एक बार में बारह (2.4 मीटर) कतार में बीज की बुवाई होती है। हर 12 कतार के बाद एक कतार छूट जाती है जिसको स्किप कतार कहते हैं।

नोटः बाजार में 6 ड्रमों के अलावा 2 तथा 4 ड्रमों वाले भी पैडी ड्रम सीडर उपलब्ध है।

कृषि विज्ञान केन्द्र बरासिन, सुलतानपुर

मशीन की कार्य क्षमताः

दो आदमी इस यंत्र से एक दिन (8 घंटे) में 1.5 हेक्टेयर (2 घंटे प्रति एकड़) की बुवाई कर सकते हैं। इस मशीन को खेत में चलाने के लिए तीन मानव श्रमिक की आवश्यकता होती है। एक श्रमिक मशीन को खेत में चलाता है, दूसरा खेत में मुड़ते समय मशीन को उठाने में मदद करता है तथा तीसरा श्रमिक ड्रमों में बीज भरने का कार्य करता है।

ड्रम सीडर की प्रयोग विधिः

- मशीन जोड़ते समय शाफ्ट पर सभी 6 ड्रम इस प्रकार रखें कि इनके ढक्कन पर तीर का निशान एक ही दिशा में हो।
- सभी नट, बोल्ट, हैण्डल व पहिये को लगा कर नट बोल्ट की ग्रीसिंग करें।
- हर ड्रम पंक्ति को रबर पट्टी या कपड़े के फीते से बंद कर दें।
- ड्रमों में 1.5–2.0 किलो अंकुरित धान के बीजों को 2/3 भाग में भर कर बंद कर दें।
- यदि खेत में पानी भरा हुआ है, तो उसे जल निकासी द्वारा निकाल दें।
- मशीन को खेत की लम्बाई के अनुसार चलायें।
- मशीन को खेत में इस प्रकार चलायें कि तीर का निशान चलने की दिशा में रहे।
- कार्य समाप्त होने पर मशीन को आयलिंग करके छायादार स्थान पर रख दें।
- ड्रमों को किसी भी अवस्था में दो–तिहाई 2/3 से ज्यादा बीज न भरे। अधिक भरने से बीज मशीन के छिद्र से ठीक प्रकार से नहीं निकल पाता है। मशीन को डिब्बों के अंदर बने हुए त्रिकोण के शिरे की ओर ही खीचे। विपरीत दिशा में खीचनें से बीज का सुचारू रूप से निकास नहीं हो पाता है। इससे मशीन की कार्य–क्षमता पर प्रभाव पड़ता है। इस बात का विशेष कर मोड़ पर अवश्य ध्यान दें।

भूमि की तैयारी

पैडी ड्रम सीडर से धान की बुवाई करने हेतु मध्यम या नीची भूमि उपयुक्त है। बुआई के लगभग एक माह पूर्व ही खेत में गोबर की सड़ी खाद 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से डालें। बुवाई के 15 दिन पूर्व खेत की जुताई करें ताकि खरपतवार नष्ट हो जाए। ड्रम सीडिंग के लिए खेत समतल होना चाहिए। बुवाई से 12–15 घंटे पहले खेत में पानी भरकर अच्छी तरह से जुताई कर लें तथा पाटा चला कर समतल कर लें। जरूरत से ज्यादा पानी निकाल दें। बुवाई के समय लेव युक्त खेत में पानी जमा नहीं रहना चाहिए।

बीज एवं बुवाई प्रबन्धन

जून के अंतिम सप्ताह तक इस यंत्र से धान की बुवाई के लिए उपयुक्त होता है। किसान भाई जब धान की नर्सरी तैयार करते है, उसी समय इस मशीन से सीधी बुवाई कर सकते है। जैसा कि पहले ही बताया गया है कि 10–15 दिन पहले ही फसल पक कर तैयार हो जाती है। किसान भाई इस तकनीक का प्रयोग फौरी योजना के तौर पर भी कर सकते हैं। कम दूरी छिद्र से 70 किग्रा0 प्रति हेक्टेयर की दर से बीज की बुवाई करें। मई–जून में बुवाई के लिए बीज को पानी में 12 घंटे ढक कर अंकुरित कर लें। इस बात का ध्यान रखें कि बीज का अंकुरण ज्यादा न होने पाये। बीज का अंकुरण 7–8 मिली मीटर हो जाए, तब बुवाई करें। अंकुरण ज्यादा होने पर (10–15 मिली मीटर) यह मशीन की कार्य क्षमता को प्रभावित करता हैं।

सावधानियॉः–

बीज की बुवाई के बाद तीन–चार दिन तक चिड़ियों का प्रकोप अधिक होता है। इससे बचाने के लिए खेत पर तीन–चार दिन तक एक मानव श्रमिक की चौकसी सुनिश्चित होना अत्यन्त आवश्यक हैं।

किस्मों का चुनाव

धान की अधिक उत्पादकता वाली किस्मों का प्रक्षेत्रों की पारिस्थितिकी के अनुसार चुनाव करें। उपरिहार प्रक्षेत्रों पर शीघ्र पकने वाली किस्में जैसे–नरेन्द्र धान 97, नरेन्द्र धान 118, साकेत 4, बारानी दीप, गोबिन्द का चुनाव करें। मध्यम प्रक्षेत्रों पर सरजू 52, नरेन्द्र 359, नरेन्द्र धान 8002, पन्त धान 4, लालमती, नरेद्र धान 2064, नरेन्द्र धान 2065, नरेन्द्र धान 3112 लगायें। निचले प्रक्षेत्रों में सॉभा महसूरी (बी0पी0टी0 5204), स्वर्णा (एम0टी0यू0 7029), स्वर्णा सब–1, सॉभा सब–1 तथा जललहरी लगायें।

संकर धान की किस्मों की बुवाई ड्रम सीडरों से न करें। इस तकनीक से प्रति हेक्टेयर लगभग 70–75 किलो

(शेष पृष्ठ 23 पर)

अरहर की वैज्ञानिक खेती

विपुल सिंह, एस. पी. सिंह, एन. पी. शाही एवं एस. के. तोमर

दलहनी फसलों में अरहर का विशेष स्थान है। अरहर की दाल में लगभग 20–21 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है, साथ ही इस प्रोटीन का पाच्यमूल्य भी अन्य प्रोटीन से अच्छा होता है। अरहर की दीर्घकालीन प्रजातियॉ मृदा में 200 कि0ग्रा0 तक वायुमण्डलीय नाइट्रोजन का स्थरीकरण कर मृदा उर्वरकता एवं उत्पादकता में वृद्धि करती है। शुष्क क्षेत्रों में अरहर किसानों द्वारा प्राथमिकता से बोई जाती है। असिंचित क्षेत्रों में इसकी खेती लाभकारी सिद्ध हो सकती है क्योंकि गहरी जड़ के एवं अधिक तापक्रम की स्थिति में पत्ती मोड़ने के गुण के कारण यह शुष्क क्षेत्रों में सर्वउपयुक्त फसल है। महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, मध्य प्रदेश, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश देश के प्रमुख अरहर उत्पादक राज्य हैं।

जलवायु

अरहर आर्द्र और शुष्क दोनों ही प्रकार के गर्म क्षेत्रों में भली प्रकार उगाई जा सकती है। लेकिन शुष्क भागों में इसे सिंचाई की आवश्यकता होती है। फसल की प्रारंभिक अवस्था में पौधों की अच्छी वृद्धि के लिए नम जलवायु की आवश्यकता होती है। इसे 75 से 100 सेंटीमीटर वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

भूमि का चुनाव एवं तैयारी

हल्की दोमट अथवा मध्यम भारी प्रचुर स्फुर वाली भूमि, जिसमें समुचित पानी निकासी हो, अरहर बोने के लिये उपयुक्त है। खेत को 2 या 3 बार हल या बखर चला कर तैयार करना चाहिये। खेत खरपतवार से मुक्त हो तथा उसमें जल निकासी की उचित व्यवस्था की जाये।

बुवाई का समय

देर से पकने वाली प्रजातियां जो लगभग 270 दिन में तैयार होती हैं, की बुवाई जुलाई माह में करनी चहिए। शीघ्र पकने वाली प्रजातियों को सिंचित क्षेत्रों में जून के मध्य तक बो देना चाहिए, जिससे यह फसल नवम्बर के अन्त तक पक कर तैयार हो जाय और दिसम्बर के प्रथम पखवारे में गेहूं की बुवाई सम्भव हो सके। अधिक उपज लेने के लिए टा–21 प्रजाति को अप्रैल प्रथम पखवार में (प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में तराई को छोड़कर) ग्रीष्म कालीन मूंग के साथ सह–फसल के रूप में बोने के लिए जायद में बल दिया जा चुका है। इसके तीन लाभ है

(अ) फसल नवम्बर के मध्य तक तैयार हो जाती है एवं गेहूं की बुवाई में देर नहीं होती है

(ब) इसकी उपज जून में (खरीफ) बोई गई फसल से अधिक होती है।

(स) मेड़ो पर बोने से अच्छी उपज मिलती है।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार

अरहर की फसल में उन्नत किस्मों का प्रमाणित बीज 10–12 किलोग्राम प्रति एकड़ लगता है। बीज को बीजोपचार करने के बाद ही बोये। बीजोपचार ट्रायकोडर्मा बिरिडी 10 ग्राम/किलो या 2 ग्राम थाइरमध्एक ग्राम बेबीस्टोन (2:1) में मिलाकर 3 ग्राम प्रति किलो की दर से बीजोपचार करने से फफूंद नष्ट हो जाती है। बीजोपचार के उपरांत अरहर का राइजोबियम कल्चर 5 ग्राम एवं पी.एस.बी. कल्चर 5 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से बीजोपचार करें। बीज को कल्चर से उपचार करने के बाद छाया में सुखाकर उसी दिन बोनी करें।

खाद का प्रयोग

अरहर की अच्छी पैदावार के लिए 10 से 15 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 से 45 किलोग्राम फास्फोरस और 20 किलोग्राम सल्फर का इस्तेमाल 1 हेक्टेयर खेत में करना चाहिए. अरहर के लिए सिंगल सुपर फास्फेट व डाई अमोनिया फास्फेट का इस्तेमाल फायदेमंद होता है।

सिंचाई तथा जल प्रबन्धन :

अरहर टा–21 तथा यू.पी.ए.एस.–120 तथा आई.सी.पी. एल.–151 को पलेवा करके तथा अन्य प्रजातियों को वर्षाकाल में पर्याप्त नमी होने पर बोना चाहिए। खेत में कम नमी की अवस्था में एक सिंचाई फलियां बनने के समय अक्टूबर माह में अवश्य की जाय। देर से पकने वाली प्रजातियों में पाले से बचाव हेतु दिसम्बर या जनवरी माह में सिंचाई करना लाभप्रद रहता है।

खरपतवार नियंत्रण

प्रथम 60 दिनों में खेत में खरपतवार की मौजूदगी अत्यन्त नुकसानदायक होती है। हैन्ड हो या खुरपी से

यंग प्रोफेशनल (निक्रा परियोजना), एस. एम. एस., प्रक्षेत्र प्रबन्धक और वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं अध्यक्ष, के. वी. के., बेलीपार, गोरखपुर
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, (उ. प्र.)– २२४२२९.

सारिणी–1 उन्नतशील प्रजातियाँ

क सं.	प्रजाति	बोने का उपयुक्त सयम	पकने की अवधि (दिनो मे)	उपज विशेषतायें विशेषताए	उपयुक्त क्षेत्र एव विशेषताए
क. अगेती प्रजातियां					
1	पारस	जून प्रथम सप्ताह	130–140	18–20	उत्तर प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्रों में इस प्रजाति की फसल ली जा सकती है।
2	यू.पी.ए.एस.–120	जून प्रथम सप्ताह	130–135	16–20	सम्पूर्ण उ.प्र.(मैदानी क्षेत्र) नवम्बर में गेहूं बोया जा सकता है
3	पूसा–992	जून प्रथम सप्ताह	150–160	16–20	उकठा रोग अपरोधी
4	टा–21	अप्रैल प्रथम सप्ताह तथा जून के प्रथम सप्ताह		160–170	16–20सम्पूर्ण उ.प्र. के लिए उपर्युक्त
देर से पकने वाली प्रजातियां (260–275 दिन)					
5	बहार	जुलाई	250–260	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा रोग अवरोधी
6	अमर	जुलाई	260–270	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा अवरोध मिश्रित खेती के लिये उपयुक्त
7	नरेन्द्र अरहर–1	जुलाई	260–270	25–30	सम्पूर्ण उ.प्र. बंझा अवरोध एवं उकठा मध्यम अवरोधी
8	आजाद	जुलाई	260–270	25–30	तदैव
9	पूसा–9	जुलाई	260–270	25–30	बंझा अवरोधी सितम्बर में बुवाई के लिए उपयुक्त
10	पी.डी.ए.–11	सितम्बर का प्रथम पखवारा		225–240	18–20''''
11	मालवीय विकास(एम.ए.6)		जुलाई	250–270	25–30उकठा एवं बंझा अवरोधी
12	मालवीय चमत्कार (एम.ए.एल.13)		जुलाई	230–250	30–32बंझा अवरोधी
13	नरेन्द्र अरहर 2	जुलाई	240–245	30–32	बंझा एवं उकठा अवरोधी सम्पूर्ण उ.प्र.

दो निकाई करें। प्रथम बुवाई के 25–30 दिन बाद एवं द्वितीय 45–60 दिन बाद खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण के साथ मृदा वायु–संचार में वृद्धि होने से फसल एवं सह जीवाणुओं की वृद्धि हेतु अनुकूल वातावरण तैयार होता है। नींदानाशक पेन्डीमिथालिन 1.25 कि.ग्रा. सकिय तत्व/हे. की दर से बुवाई के बाद 3 दिनों के अंदर प्रयोग करने से खरपतवार खेत में नहीं उगता है। नींदानाशक प्रयोग के बाद एक निकाई लगभग 30 से 40 दिन की अवस्था पर करना लाभदायक होता है।

पौध संरक्षण

अ. बीमारियाँ एवं उनका नियंत्रणः–

1. उकटा रोग

रोग के लक्षण साधारणतया फसल में फूल लगने की अवस्था पर दिखाई पडते है। सितंबर से जनवरी महीनों के बीच में यह रोग देखा जा सकता है। पौधा पीला होकर सूख जाता है । इसमें जडें सड़ कर गहरे रंग की हो जाती है। इस बीमारी से बचने के लिए रेागरोधी जातियाँ जैसे जे.के.एम–189, सी.–11, जे. के.एम–7, बी.एस.एम.आर.–853, 736 आशा आदि बोये। उन्नत जातियों के बीज बीजोपचार करके ही बोयें ।

2. बांझपन विषाणु रोग

इसके लक्षण ग्रसित पौधों के ऊपरी शाखाओं में पत्तियाँ छोटी, हल्के रंग की तथा अधिक लगती है और फूल–फली नही लगती है। यह रोग माईट, मकड़ी के द्वारा फैलता है। इसकी रोकथाम हेतु रोग रोधी किस्मों को लगाना चाहिए। खेत में बेमौसम रोग ग्रसित अरहर के पौधों को उखाड कर नष्ट कर देना चाहिए। मकड़ी का नियंत्रण करना चाहिए।

3. फायटोपथोरा झुलसा रोग

रोग ग्रसित पौधा पीला होकर सूख जाता है। इसमें तने पर जमीन के उपर गठा नुमा असीमित वृद्धि दिखाई देती है व पौधा हवा आदि चलने पर यहीं से टूट जाता है। इसकी रोकथाम हेतु 3 ग्राम मेटेलाक्सील फफूँदनाशक दवा प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें। रोग रोधी जाति जे.ए.–4 एवं जे.के. एम.–189 को बोना चाहिए।

ब. कीट

1. फली मक्खी

यह फली पर छोटा सा गोल छेद बनाती है। जिसके कारण दानों का सामान्य विकास रूक जाता है। दानों का आकार छोटा रह जाता है, जिसके कारण फली पर छोटा सा छेद दिखाई पडता है। फली मक्खी तीन

सप्ताह में एक जीवन चक्र पूर्ण करती है।

2. फली छेदक इल्ली

यह फलियों के हरे ऊत्तकों को खाती हैं, कलियों, फूलों, फलियों व बीजों को नुकसान करती है। यह फलियों पर टेढे–मेढे छेद बनाती है।

3. फली का मत्कुण

इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही फली एवं दानों का रस चूसते हैं, जिससे फली आड़ी–तिरछी हो जाती है एवं दाने सिकुड़ जाते है।

4. प्लू माथ

यह कीट फली पर छोटा सा गोल छेद बनाती है। कुछ समय बाद प्रकोपित दाने के आसपास लाल रंग की फफूँद आ जाती है।

5. ब्रिस्टल ब्रिटल

यह कलियों फूलों तथा कोमल फलियों को खाती है। जिससे उत्पादन में काफी कमी आती है। यह कीट अरहर, मूंग, उडद तथा अन्य दलहनी फसलों को नुकसान पहुचाता है।

नियंत्रण

- आवश्यकता पडने पर एवं अंतिम हथियार के रूप में ही कीटनाशक दवाओं का छिडकाव करें।
- फली मक्खी एवं फली के मत्कुण के नियंत्रण हेतु सर्वांगीण कीटनाशक दवाओं का छिडकाव करें जैसे डायमिथोएट 30 ई.सी. या प्रोपेनोफॉस–50 के 1000 मिली. मात्रा 500 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

फली छेदक इल्लियों के नियंत्रण हेतु

इण्डोक्सीकार्ब 14.5 ई.सी. 500 एम.एल. या क्वीनालफास 25 ई.सी. 1000 एम.एल. या ऐसीफेट 75 डब्लू.पी. 500 ग्राम को 500 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिडकाव करें। दोनों कीटों के नियंत्रण हेतु प्रथम छिडकाव सर्वांगीण कीटनाशक दवाई का करें तथा 10 दिन के अंतराल से स्पर्श या सर्वांगीण कीटनाशक दवाई का छिडकाव करें। तीन छिडकाव में पहला फूल बनना प्रारंभ होने पर, दूसरा 50 प्रतिशत फूल बनने पर और तीसरा फली बनने की अवस्था पर करने से सफल कीट नियंत्रण होता है।

फसल की कटाई

सब्जियों के लिए उगाई गई फसल पत्तों और फलियों के हरे होने पर काटी जाती है और दानों वाली फसल को 75–80 प्रतिशत फलियों के सूखने पर काटा जाता है। कटाई में देरी होने पर बीज खराब हो जाते हैं। कटाई हाथों और मशीनों द्वारा की जा सकती है। कटाई के बाद पौधों को सूखने के लिए सीधे रखें। गोहाई कर के दाने अलग किए जाते हैं और आम तौर पर डंडे से कूट कर गोहाई की जाती है।

उपज

उन्नत विधि से खेती करने पर 15–20 कुन्तल प्रति हे0 दाना एवं 50–60 कुन्तल लकड़ी प्राप्त होती है।●

(पृष्ठ 20 का शेष)

ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। संकर धान चूँकि महँगा होता है, इसलिये लागत अधिक आती है, अतः इस पद्धति के लिए उपयुक्त नहीं हैं।

उर्वरक प्रबन्धन

ड्रम सीडर से लगाये गये धान में नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश 60:30:30 या 120–150:60:60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से किस्मों एवं पारिस्थितिकी के अनुसार डालें, अर्थात लम्बी अवधि की प्रजातियां एवं सिंचित प्रक्षेत्रों में 120–150:60:60 तथा कम अवधि एवं असिंचित प्रक्षेत्रों में 60:30:30 किग्रा/हे0 की दर से प्रयोग करें। जिंक, लौह एवं गंधक की कमी प्रदेश के अनेक जनपदों में देखी जा रही है। अतः परीक्षण के आधार पर उचित प्रबन्धन करें।

खर पतवार नियंत्रणः

सीधी बुवाई वाली धान की फसल में यदि खरपतवार नियंत्रण समय पर नहीं किया जाये तो इसमें उपज में बहुत कमी हो जाती है। खरपतवार का नियंत्रण निराई द्वारा या पैडी वीडर से किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य रसायनों में ब्यूटाक्लोर 1.5 लीटर प्रति हेक्टेयर (0.5 सक्रिय तत्व) 700–800 लीटर पानी में घोल बुवाई के 3–4 दिन के अंदर छिड़काव करें।

खाली जगह के भराव के लिएः

खेत में एक कोने पर 2–3 किग्रा अंकुरित बीज की बुवाई कर दें। 10 दिन के उपरान्त खेत में जहॉ–जहॉ कतार में खाली जगह दिखे उस जगह का भराव करें।

पैडी ड्रम सीडर द्वारा बुवाई कर के किसान भाई लागत में कमी कर सकते है तथा लाभ कमा सकते हैं। यह मशीन विश्वविद्यालय से संचालित विभिन्न कृषि विज्ञान केन्द्रों में प्रदर्शन हेतु मुफ्त कृषकों को उपलब्ध कराई जा रही हैं।●

खरीफ मक्का उत्पादन तकनीकी

नरेन्द्र प्रताप[1], संजीत कुमार[2], ए0 पी0 राव[3]

खरीफ फसलों में धान के बाद मक्का प्रदेश की मुख्य फसल है। इसकी खेती, दाने, भुट्टे एवं हरे चारे के लिए की जाती है। मक्का के अन्तर्गत अधिकतर क्षेत्रफल वर्षा पर आधारित है, जिसके कारण उत्पादकता कम है। मक्का की अच्छी उपज के लिए आवश्यक है कि समय से बुवाई, निकाई–गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, समय से सिंचाई एवं फसल सुरक्षा साधनों को अपनाया जाय। संस्तुत पद्धतियों एंव संकर, संकुल प्रजातियों को अपनाकर उपज में सरलता से 30–40 कु0/हे० प्राप्ति की जा सकती है, साथ ही अल्प अवधि की फसल होने के कारण बहु फसली खेती के लिए इसका अत्यन्त महत्व है।

भूमि एंव खेत की तैयारी

मक्का की खेती के लिए उत्तम जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि उपयुक्त होती है। पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा अन्य दो या तीन जुताइयां देशी हल या कल्टीवेटर या रोटावेटर द्वारा करनी चाहिए।

शुद्ध बीज का प्रयोग

अच्छी उपज प्राप्त करने हेतु उन्नतिशील प्रजातियों का शुद्ध बीज ही बोना चाहिए। बुवाई के समय एवं क्षेत्र अनुकूलता के अनुसार प्रजाति का चयन करें।

बुवाई

अ) बुवाई का समय

देर से पकने वाली मक्का की बुवाई मध्य मई से मध्य जून तक पलेवा करके करनी चाहिए, जिससे वर्षा प्रारम्भ होने से पहले ही खेत में पौधे भली भांति स्थापित हो जायें और बुवाई के 15 दिन बाद एक निराई भी हो जाय।

शीघ्र पकने वाली मक्का की बुवाई जून के अन्त तक कर ली जाय तथा वर्षा के समय वाली 10 जुलाई तक बुवाई कर ली जाय।

ब) बीजोपचार

बीज बोने से पूर्व 1 किग्रा० बीज को थीरम 2.5 ग्राम या 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम से बोने से पहले शोधित कर लें।

स) भूमि शोधन तथा जिंक का प्रयोग

जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप होता है वहां आखिरी जुताई पर क्लोरपाइरीफास 20 ई.सी. की 2.5 लीटर मात्रा को 5 लीटर पानी में घोलकर 20 किलोग्राम बालू में मिलाकर प्रति हे. की दर से बुवाई के पहले मिट्टी में मिला दें।

जिंक तत्व की कमी के कारण पत्तियों के नस के दोनों ओर सफेद लम्बी धारियां पड़ जाती हैं। जिन क्षेत्रों में गत वर्ष ऐसे लक्षण दिखाई दिये हों उनमें अन्तिम जुताई के साथ 20 किलोग्राम जिंक सल्फेट प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाकर बीज बोना चाहिए। इसका प्रयोग फॉस्फोरस उर्वरक के साथ मिलाकर न किया जाय।

द) बीज दर

देशी छोटे दाने वाली प्रजाति के लिए 16–18 किग्रा., संकर के लिए 20–22 किग्रा. एवं संकुल प्रजातियों के लिए 18–20 किग्रा. प्रति हेक्टर।

य) बुवाई की विधि

बुवाई हल के पीछे कूंडों में 3.5 सेमी. की गहराई पर करें। लाइन से लाइन की दूरी अगेती किस्मों में 45 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी.।

मध्यम एवं देर से पकने वाली प्रजातियों में लाइन से लाइन की दूरी 60 सेमी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 25 सेमी. होनी चाहिये।

निराई–गुड़ाई खरपतवार नियंत्रण

मक्का की खेती में निराई गुड़ाई का अधिक महत्व है। निराई गुड़ाई द्वारा खरपतवार नियंत्रण के साथ ही आक्सीजन का संचार होता है जिससे जड़ दूर तक फैल कर भोज्य पदार्थ को एकत्र कर पौधों को देती है। पहली निराई जमाव के 15 दिन बाद, और दूसरी निराई 35–40 दिन बाद करनी चाहिए।

रासायनिक विधि से मक्का में खरपतवारों को नष्ट करने के लिए–

1. एट्राजीन 2 किग्रा. प्रति हे. मध्यम से भारी मृदाओं में तथा 1.25 किग्रा. प्रति हे. हल्की मृदाओं में बुवाई के तुरन्त 2 दिनों में 500 लीटर/हे. पानी में मिलाकर स्प्रे करने से एकवर्षीय घासकुल एवं चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार बहुत ही प्रभावी रूप से नियन्त्रित हो जाते हैं, साथ ही पथरचटा

1 विषय वस्तु विशेषज्ञ पादप प्रजनन, कृषि विज्ञान केन्द्र वाराणसी, 2 वरिष्ठ वैज्ञानिक एंव अध्यक्ष, कृषि विज्ञान केन्द्र वाराणसी,
3 निदेशक प्रसार, आ0न0दे0कृ0प्रौ0वि0वि0 कुमारगंज अयोध्या

सारिणी–1 विभिन्न क्षेत्रों के लिये संस्तुत प्रजातियाँ व उनकी उपज क्षमता

प्रजाति का नाम	पकने की अवधि	उपज (कु./हे.)
संकर		
गंगा–11	100–105	45–50
सरताज	100–110	45–50
एच.क्यू.पी.एम.5 एच.क्यू.पी.एम.8	105–110	50–55
दकन–107, मालवीय संकर मक्का–2	90–95	40–45
जे.एच.–3459, प्रकाश, पूसा संकर मक्का–5	80–85	35–40
विवेक संकर मक्का–27	75–80	25–30
शक्ति–1 (फच्ड) 80–85	80–85	30–35
प्रो–316 (4640), बायो–9681, वाई–1402	105–110	40–45
प्रो–303 (3461), केएच–9451, केएच–510, एमएमएच–69, बायो–9637	90–95	40–45
बायो–9682	85–95	40–45
एमएमएच–113, एक्स –1123(3342)	80–85	35–40
संकुल		
प्रभात	100–110	40–45
नवजोत, पूसा कम्पोजिट–2, श्वेता सफेद	85–90	35–40
नवीन	85–90	35–40
आजाद उत्तम, प्रगति, गौरव	80–85	30–35
कंचन, सूर्या	75–80	25–30

(ट्राइरगन्थिया) भी नष्ट हो जाता है।

2. जहॉ पर पथरचटा की समस्या नहीं है, वहॉ पर लासो 50 ई.सी. (एलाक्लोर) 5 लीटर प्रति हेक्टर. बुवाई के दो दिनों के अन्दर प्रयोग करना आवश्यक है।

उर्वरकों का संतुलित प्रयोग

मक्का की भरपूर उपज लेने के लिए संतुलित उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है। अतः कृषकों को मृदा परीक्षण के आधार पर उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।

यदि मृदा परीक्षण न हुआ हो तो देर से पकने वाली संकर एवं संकुल प्रजातियों के लिए क्रमशः 120 : 60 : 60 व शीघ्र पकने वाली प्रजातियों के लिए 100 : 60 : 40 तथा देशी प्रजातियों के लिए 80 : 40 : 40 किग्रा. नत्रजन, फास्फोरस तथा पोटाश प्रति हेक्टर प्रयोग करना चाहिए।

गोबर की खाद 10 टन प्रति हे. प्रयोग करने पर 25 प्रतिशत नत्रजन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

बुवाई के समय एक चौथाई नत्रजन, पूर्ण फास्फोरस तथा पोटाश कूड़ों में बीज के नीचे डालना चाहिए। अवशेष नत्रजन तीन बार में बराबर–2 मात्रा में टापड्रेसिंग के रूप में करें। पहली टापड्रेसिंग बोने के 25–30 दिन बाद (निराई के तुरन्त बाद) दूसरी नर मंजरी से आधा पराग गिरने के बाद, संकर मक्का में बुवाई के 50–60 दिन बाद एवं संकुल में 45–50 दिन बाद की जाती हैं।

जल प्रबन्धन

पौधों को प्रारम्भिक अवस्था तथा सिल्किंग से दाना पड़ने की अवस्था पर पर्याप्त नमी आवश्यक है। अतः यदि वर्षा न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई अवश्य करना चाहिए। सिल्किग के समय पानी न मिलने पर दाने कम बनते है, वर्षा के बाद खेत से पानी के निकास का अच्छा प्रबन्ध होना चाहिए, अन्यथा पौधे पीले पड़ जाते हैं और उनकी बाढ़वार रूक जाती है।

अन्य आवश्यक क्रियायें

कौओं, चिड़ियों तथा जानवरों से फसल की रक्षा हेतु रखवाली आवश्यक है।

मक्का की बुवाई मेड़ों पर करें। विरलीकरण (थिनिंग) द्वारा पौधों की निर्धारित दूरी/संख्या सुनिश्चित कर लें।

वर्षा के पानी और तेज हवा से फसल को बचाने के लिए पौधों की जड़ों पर मिट्टी पलटने वाले हल से मिट्टी चढ़ा देनी चाहिए।

कटाई – मड़ाई

फसल पकने पर भुट्टों को ढंकने वाली पत्तियां जब 75 प्रतिशत झड़ जाएं एंव पीली पड़ने लगती हैं, तब कटाई करनी चाहिए। भुट्टों की तुड़ाई करके उसके पत्ती को छीलकर धूप में सुखाकर हाथ या मशीन द्वारा दाना निकाल देना चाहिए।

10. फसल सुरक्षा

अ) कीट

1. तना छेदक कीट :

पूर्ण विकसित सूंड़ी 20–25 मिमी. लम्बी, गन्दे भूरे सफेद रंग की होती है। इसका सिर काला होता है तथा शरीर पर चार भूरी धारियॉ पाई जाती हैं। इसका प्रौढ़ पीले भूरे रंग का होता है।

इस कीट की सूड़ियॉ तनों में छेद करके अन्दर ही खाती रहती हैं। फसल के प्रारम्भिक अवस्था में प्रकोप के फलस्वरूप मृतगोभ बनता है परन्तु बाद की अवस्था में प्रकोप होने पर पौधे कमजोर हो जाते है, भुट्टे छोटे आते हैं तथा हवा चलने पर पौधा बीच से टूट जाता है।

2. पत्ती लपेटक कीट

इस कीट की सूंड़ी हल्के पीले रंग की होती है जो पत्तियों के दोनों किनारों को रेशम जैसे सूत से लपेट कर अन्दर ही रहती है तथा अन्दर से हरे पदार्थ को खुरचकर खाती है।

4. कमला कीट

सूड़ियां 40–45 मिमी. लम्बी होती हैं। इनका शरीर घने भूरे रंग के बालों से ढका रहता है। इस कीट की सूड़ियां पत्तियों को खाकर काफी नुकसान पहुॅचाती है।

5. माहू

हरी टागों वाली गहरे भूरे या पीले रंग वाली पंखहीन एवं पंखयुक्त गोभ, हरे भुट्टों एवं पत्तियों से रसचूस कर हानि करती है। प्रत्येक मादा 1–5 शिशु/दिन की दर से 10–25 दिन में 24–47 शिशु पैदा करती है।

6. छाले वाला भृंग

मध्यम आकार की 125–25 सेमी. लम्बी चमकीले नीले, हरे, काले या भूरे रंग की होती है। छेड़ने पर ये अपने फीमर के अन्तिम छोर से कैन्थ्रेडिन युक्त एक तरल पदार्थ निकालती है जिस के त्वचा पर लगने से छाले पड़ जाते हैं। इनके प्रौढ़ फूलों एवं पत्तियों को खाकर नुकसान पहुॅचाते हैं। इनकी सूड़ियों का विकास टिड्डे एवं मधुमक्खियों के अण्डों पर होता है।

एकीकृत प्रबन्धन :–

- खेत में पड़े पुराने खरपतवार एवं अवशेषों को नष्ट करना चाहिए।
- इमिडाक्लोप्रिड 6 मिली./किग्रा. बीज दर से बीज शोधन करना चाहिए।
- संतुलित मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए।
- मृतगोभ दिखाई देते ही प्रकोपित पौधों को भी उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे० बुरकाव अथवा 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये – कार्बोफयूरान 3 प्रतिशत ग्रेन्यूल 20 कि.ग्रा. बुवाई से 20–25 दिन में अथवा कार्बेरिल 50 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण 1.5 किग्रा०/हे0 अथवा डाईमेथोएट 30 प्रतिशत ई०सी० 1.0 ली० प्रति हे० अथवा क्यूनालफास 25 प्रतिशत ई०सी० 1.50 लीटर प्रति हे०।
- प्ररोह मक्खीः प्रभावी क्षेत्रों में 20 प्रतिशत बीज दर को बढ़ा कर बुवाई करना चाहिए।
- प्ररोह मक्खीः प्रभावित क्षेत्रों में बुवाई मानसून आने के 10–15 दिन बाद करना चाहिए।
- सप्ताह के अन्तराल पर फसल का निरीक्षण करना चाहिए।
- प्रारम्भिक अवस्था में कमला कीट की झुण्ड में पाई जाने वाली गिडारों को सावधानी से पकड़ कर नष्ट कर देना चाहिए।
- तना छेदक एवं पत्ती लपेटक कीटों के लिए ट्राइकोग्रामा परजीवी 50000 प्रति हे. की दर से अंकुरण के 8 दिन बाद 5–6 दिन के अन्तराल पर 4–5 बार खेत में अवमुक्त करना चाहिए।
- माहू के प्रकोप की दशा में क्राइसोपर्ला कार्निया को 50000/हे. की दर से सप्ताह के अन्तराल पर अवमुक्त करना चाहिए।
- दीमक – खड़ी फसल में प्रकोप होने पर सिंचाई के पानी के साथ क्लोरपाइरीफास 20 प्रतिशत ई०सी० 2.5 ली० प्रति हे० की दर से प्रयोग करें।
- सूत्रकृमि – बुवाई से एक सप्ताह पूर्व खेत में 10 किग्रा० फोरेट 10 जी फैलाकर मिला दें।

ब) रोग

1. तुलासिता रोग

इस रोग में पत्तियों पर पीली धारियां पड़ जाती है। पत्तियों के नीचे की सतह पर सफेद रूई के समान फफूंदी दिखाई देती हैं। ये धब्बे बाद में गहरे अथवा लाल भूरे पड़ जाते है। रोगी पौधों में भुट्टे कम बनते हैं। या बनते ही नहीं हैं। रोगी पौधे बौने एवं झाड़ीनुमा हो जाते हैं।

(शेष पृष्ठ 28 पर)

स्टीविया-प्राकृतिक मिठास का उत्तम विकल्प

अनु सिंह एवं ए. पी. राव

स्टीविया रिबाउडियाना या मीठी तुलसी, एक बारहमासी झाड़ी है, जो कि एस्टरेसिया परिवार से संबंधित पौधा है। आमतौर पर मधुपत्र, मधुपर्णी, हनीप्लांट, शुगरलीफ, स्टीविया आदि नामों से जाना जाता है। यह मीठी पत्तियों के लिए वृहत मात्रा में उगाया जाता है। इसके पौधें की पत्तियाँ अपनी सामान्य अवस्था में आम शक्कर से लगभग 25 से 30 गुणा मीठी होती है। जबकि इससे निकाला जाने वाला एक्स्ट्रैक्ट शक्कर से लगभग 300 गुणा ज्यादा मीठा होता है। स्टीविया एक प्राकृतिक शून्य कैलोरी स्वीटनर है। इसके अन्य रसायनिक घटकों में स्टीवियोसाइड शामिल है जो दुनिया का सबसे मीठा प्राकृतिक स्वीटनर है।

वर्तमान समय में जिस प्रकार की निष्क्रिय जीवन शैली आम नागरिक जी रहे हैं, उससे मोटापे तथा मधुमेह की समस्या निरंतर बढ़ती जा रही है। चीन के बाद भारत में मधुमेह के मरीज सबसे ज्यादा हैं। इस स्थिति के फलस्वरूप विभिन्न अल्प कैलोरी स्वीटनर हमारे भोजन का आवश्यक अंग बन चुके हैं। ऐसे में स्टीविया एक प्राकृतिक मिठास का अच्छा विकल्प है।

स्टीविया में उपस्थित पोषक तत्व

स्टीविया के पत्ते का स्वाद मीठा होता है। स्टीविया की पत्तियों में मिठास इसमें प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले स्टेविओल ग्लाइकोसाइड्स के कारण होता है, जिसके कारण इसे मधुमेह रोगियों के लिए उपयोगी माना गया है। स्टीविया की पत्तियां स्टीविओसाइड, रेबायोडायसाइड ए, बी, सी, डी, एफ, डुलकोसाइड और स्टीविओल्बोसाड जैसे यौगिकों का एक उत्कृष्ट स्रोत है, जो मिठास के लिए जिम्मेदार होते हैं। इन यौगिकों में इंसुलिन को बैलेंस करने के गुण पाए जाते हैं। स्टीविया में एंटीऑक्सिडेंट यौगिक जैसे कि फ्लेवनॉयड्स, ट्राइटर्पीन्स, टैनिन, कैफीक एसिड, कैफीनोल और क्वेरसेटिन आदि शामिल हैं। स्टीविया पौधे में फाइबर, प्रोटीन, लोहा, पोटैशियम, मैग्नीशियम, सोडियम, विटामिन ए और विटामिन सी भी शामिल हैं। हालांकि स्वीटनर के रूप में इन अतिरिक्त तत्वों का योगदान लगभग नगण्य है। छोटे कार्बनिक यौगिक स्टीविया के स्वास्थ्य लाभों में मुख्य भूमिका निभाते हैं।

स्टीविया की खेती

विश्व में इसकी खेती पेरूग्वे, जापान, कोरिया, ताइवान, अमेरिका, इत्यादि देशों में होती है। भारत में दो दशक पहले इसकी खेती शुरू हुई थी। स्टीविया भारतवर्ष में कृषि के लिए अपेक्षाकृत नया पौधा है।

भारतवर्ष के विभिन्न भागों जैसे कर्नाटक, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, पंजाब, हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश आदि में भी इसकी खेती प्रारंभ हो चुकी है। अर्ध आर्द्र एवं अर्ध–उष्ण किस्म की जलवायु इसके लिए उपयुक्त है। यह 10 डिग्री सेल्सियस से 40 डिग्री सेल्सियस तक के तापमान में उगाया जा सकता है। अच्छी जल निकास वाली रेतीली दोमट मिट्टी जिसका पी.एच. 6.0 से 8.0 तक हो उपयुक्त मानी जाती है। स्टीविया का रोपन मेंडों पर किया जाता है। टिश्यू कल्चर से भी पौधों को तैयार किया जाता है। स्टीविया वर्ष भर कभी भी लगाई जा सकती है, लेकिन इसे लगाने का उपयुक्त समय फरवरी–मार्च है। एक बार स्टीविया की बुआई के उपरांत इससे पांच सल तक फसल प्राप्त कर सकते हैं।

स्टीविया के लाभ

- त्वचा पर होने वाले एक्जीमा और डर्मेटाइटिस जैसे विकारों को ठीक करने में स्टीविया मददगार साबित होता है। स्टेरॉयड के रूप में काम करते हुए ये जीवाणुओं को फैलने से रोकता है।
- इसमें उपस्थित एंटीऑक्सीडेंट यौगिक जैसे कि फ्लावोनोइड्स, टैनिन, काम्पोरेल आदि कैंसर के उपचार में एक आदर्श आहार पूरक हैं। यह फ्री रेडिकल्स को खत्म करके, स्वस्थ कोशिकाओं को कैंसर कोशिकाओं में बदलने से रोकते हैं।
- मधुमेह के उपचार के लिए स्टीविया अत्यंत लाभकारी है। यह शरीर में रक्त शर्करा के स्तर को नियंत्रित कर सकता है। स्टीविया में स्टीवियोसाइड नामक यौगिक पाया जाता है, जिसे एक गैर कार्बोहाईड्रेट ग्लाइकोसाइड यौगिक के रूप में जाना जाता है। यह इंसुलिन प्रतिरोध में वृद्धि, ग्लूकोज अवशोषण को रोकने तथा ब्लड

एम.एस.सी. (खाद्य प्रौद्योगिकी), खाद्य प्रौद्योगिकी केन्द्र, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज, उत्तर प्रदेश

शुगर को स्थिर करने का काम करता है।

- दातों और मसूडों के सूजन को ठीक करने में स्टीविया लाभकारी माना जाता है।
- कुछ शोधों के अनुसार ऐसा माना जाता है कि स्टीविया के पत्तियों के सेवन से कैल्शियम की कमी को दूर किया जा सकता है। इसका सेवन हड्डियों को मजबूत बनाता है।
- स्टीविया चीनी से ज्यादा मीठी होने के बावजूद भी कम कैलोरी वाली होती है तथा यह शुगर के स्तर को भी प्रभावित नहीं करती हैं अतः जो लोग अपना वजन कम करना चाहते हैं, स्टीविया का नियमित सेवन कर सकते हैं।
- उच्च रक्तचाप को नियंत्रित करने में भी स्टीविया के फायदे नजर आते हैं। स्टीविया में स्टीवियोसाइड के अलावा भी कई प्रकार के ग्लाइकोसाइड पाए जाते हैं। ये ग्लाइकोसाइड्स रक्त वाहिकाओं को आराम पहुँचाने, पेशाब में वृद्धि करने और हमारे शरीर से सोडियम को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इससे उच्च रक्तचाप नियंत्रण में रहता है।
- एक शोध के अनुसार इसका सेवन करने से यकृत कोशिकाओं के क्षति और सिरोसिस जैसे विकारों को रोका जा सकता है।

स्टीविया की उपयोगिता

स्टीविया की पत्तियां स्टेविओल ग्लाइकोसाइड्स का एक उत्कृष्ट स्रोत हैं, जो मिठास के लिए जिम्मेदार होते हैं और खाद्य पदार्थों, पेय पदार्थों, दवाओं में चीनी प्रतिस्थापन के लिए इनका व्यावसायिक रूप से उपयोग किया जा रहा है। 2005 में फूड सेफ्टी एंड स्टैंडर्ड अथॉरिटी ऑफ इंडिया ने स्टीविया को स्वीटनर के तौर पर दूध से बने मिठाई, दही, कार्बोनेटेड वॉटर (सोडा), पलेवर्ड ड्रिंक, जैम, रेडी टू इट सीरियल्स में इस्तेमाल करने की मंजूरी दी। हालांकि, भारी वैश्विक मांग को पूरा करने के लिए स्टीविया–निर्मित खाद्य उत्पादों के व्यावसायिक उत्पादन सम्बंधित अधिक शोध की आवश्यकता है। इसके अलावा मछलियों के भोजन तथा सौंदर्य प्रसाधन व दवा कंपनियों में बड़े पैमाने पर इन पत्तियों की मांग होती है।

उपभोक्ताओं में प्राकृतिक स्रोतों से उत्पादों की मांग बढ़ रही है। कैलोरी समृद्ध चीनी पर जनता की निर्भरता को कम करने की जरूरत है, जो अंततः मधुमेह और उसके संबद्ध रोगों को कम करेगा। सरकार इसकी खेती के लिए किसानों को सब्सिडी भी दे रही है। ऐसे में इसकी खेती से किसान अधिक लाभ कमा सकते हैं। यदि इसकी खेती के साथ इसका एक स्थानीय बाजार बनाया जाए तथा लोगों को इसके बारे में ज्यादा जागरूक किया जाए तो यह एक बेहतर आय का विकल्प बनेगा। ●

(पृष्ठ 26 का शेष)

निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे० बुरकाव प्रति 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये – जिरम 80 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा० अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा० अथवा मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा०।

2. पत्तियों का झुलसा रोग

इस रोग में पत्तियों पर बड़े लम्बे अथवा कुछ अण्डाकार भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। रोग के उग्र होने पर पत्तियां झुलस कर सूख जाती हैं।

निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे० बुरकाव प्रति 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये – जिनेब या मैंकोजेब 75ः डब्ल्यू. पी. 2 किलोग्राम अथवा जीरम 80 प्रतिशत 2 ली० अथवा जीरम 27 प्रतिशत 3 ली०।

3. गुलाब उकठा रोग

निम्नलिखित रसायन में से किसी एक रसायन को प्रति हे० बुरकाव प्रति 500–600 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिये – जिरम 80 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा० अथवा जिनेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा० अथवा मैंकोजेब 75 प्रतिशत डब्लू०पी० 2.0 किग्रा०।

4. तना सड़न

यह रोग अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में लगता हैं इसमें तने की पोरियों पर जलीय धब्बे दिखाई देते हैं जो शीध्र ही सड़ने लगते हैं और उससे दुर्गन्ध आती हैं। पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं।

रोग दिखाई देने पर स्ट्रेप्टोमाइसीन सल्फेट 90 प्रतिशत, टेट्रा साइक्लीन हाइड्रोक्लोराइड 10 प्रतिशत 15 ग्राम अथवा 60 ग्राम एग्रीमाइसीन तथा 500 ग्राम कापर आक्सीक्लोराइड प्रति हे० की दर से छिड़काव करने से अधिक लाभ होता हैं।●

तिल की उनन्नत खेती

के.के. श्रीवास्तव, राजेश, सत्य प्रकाश, अमरनाथ सिंह एवं शिवांगी नेगी

खरीफ तिलहनी फसलों में तिल एक प्रमुख फसल है। भारत वर्ष में इसकी खेती अति प्राचीनकाल से होती आ रही है। तिल के बीजों में 44–54 प्रतिशत तक तेल तथा 18–20 प्रतिशत तक प्रोटीन पाया जाता है। भारत वर्ष में कुल उत्पादित तिल के बीज का लगभग 78 प्रतिशत तेल निकालने में, 2.5 प्रतिशत बुवाई करने में तथा शेष मात्रा धार्मिक हिन्दू रीति रिवाजों व विभिन्न तरीकों से बनाये जाने वाले भारतीय व्यंजनों जैसे गजक व रेवड़ी इत्यादि बनाने में प्रयुक्त होता है। तिल के बीजों से प्राप्त कुल तेल की 73 प्रतिशत मात्रा खाद्य तेलों के रूप में तथा शेष मात्रा पेन्ट, दवाइंया और कीटनाशी बनाने में उपयोग में लायी जाती है। तेल निकालने के बाद बची हुयी खल पशुओं को खिलाने के साथ–साथ खाद के भी काम आती है। उत्पादन व उत्पादकता की दृष्टि से बर्मा, भारत व चीन क्रमशः पहले, दूसरे व तीसरे स्थान पर हैं।

जलवायु

तिल की अच्छी पैदावार के लिये लम्बा गर्म मौसम उचित रहता है। इसकी खेती के लिये 25–27 डिग्री सेल्सियस तापमान उपयुक्त होता है, क्योंकि इस तापक्रम पर बीज का शीघ्र जमाव, पौधे का प्राम्भिक विकास व फूलों का बनना अच्छा रहता है। परन्तु यदि पुष्पावस्था पर तापक्रम कम रहता है तो नपुंसक परागकण ज्यादा पैदा होते हैं तथा पूर्व परिपक्व अवस्था में ही फूल गिर जाते हैं। अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में इसकी खेती उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इन क्षेत्रों में फफूँद जनित रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है।

भूमि व तैयारी

उचित जल निकास होने पर तिल लगभग सभी प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है, लेकिन पर्याप्त नमी की अवस्था में बलुई दोगट मृदायें सर्वोत्तम रहती हैं। अत्यधिक बलुई क्षारीय भूमि इसकी खेती के लिये उपयुक्त नहीं है। तिल को 8 पी0एच0 वाली मृदाओं में भी आसानी से उगाया जा सकता है।

तिल का बीज बहुत छोटा होता है, इसलिये भूमि भुरभुरी होनी चाहिये, ताकि बीज का अंकुरण अच्छा हो सके। वर्षों के पश्चात प्रथम जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा आवश्यकतानुसार 2–3 जुताईयां देशी हल या डिस्कहैरो से करके पाटा लगाने से भूमि भुरभुरी हो जाती है। खेत तैयारी के समय ध्यान रखना चाहिये कि बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी हो ताकि अंकुरण अच्छा हो।

बीज एवं बुवाई

तिल की बुवाई के लिये 3–4 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त रहता है। चूँकि तिल का बीज आकार में छोटा होता है, इसलिये इसे 2–3 सेमी. से ज्यादा गहरा नहीं बोना चाहिये। तिल की बुवाई से पूर्व, जड़ व तना गलन रोग से बचाव के लिये बीजों को 1 ग्राम कार्बेन्डिजम+2 ग्राम थाइरम प्रति किलो बीज के हिसाब से उपचारित करें।

जीवाणु अंगमारी रोग से बचाव हेतु बीजों को 2 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लिन का 10 लीटर पानी में घोल बनाकर बीज को उपचारित करें। कीट नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू.एस. की 7.5 ग्राम दवा किलो बीज के हिसाब से उपचारित कर बुवाई करें।

उत्तर भारत में तिल की बुवाई खरीफ मौसम से जून के अन्तिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह के मध्य प्रथम वर्षा के बाद करनी चाहिए। इसकी बुवाई पंक्तियों में करनी चाहिये, जिसके लिये पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30–45 सेमी. रखने से अधिक उपज प्राप्त होती है। बुवाई में देरी करने से फसल के उत्पादन में कमी होती जाती है। बुवाई के समय यदि तापमान 25–27 डिग्री सेल्सियस हो तो वह अंकुरण के लिये अच्छा रहता है।

खाद एवं उर्वरक

सामान्यतः तिल की खेती लघु एवं सीमान्त कृषकों द्वारा कम अच्छे खेतों में व बिना उर्वरक के करते हैं और किसानों की यह अनदेखी तिल की कम औसत उपज के रूप में परिलक्षित होती है। इसके अतिरिक्त

बीज तकनीकी अनुभाग, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या

एक प्रचलित चलन यह है कि तिल को पिछली फसल की बची हुयी खेत की उर्वरता में उगाते हैं। वर्षा आधारित तिल की फसल से अच्छी उपज प्राप्त करने के लिये बुवाई से एक माह पूर्व 20–25 टन कम्पोस्ट या एफवाईएम डाल देना चाहिए और अधिक उपज प्राप्त करने के लिये कार्बनिक खादों के अतिरिक्त 30 किग्रा0 नत्रजन, 60 क्रिग्रा, फास्फोरस तथा 30 किग्रा. पोटास प्रति हेक्टेयर की दर से फसल में देना चाहिये। नत्रजन की 2/3 मात्रा तथा शेष नत्रजन को पहली सिंचाई के समय खेत में डालना चाहिये।

निराई–गुड़ाई

तिल खरीफ की फसल है तथा प्रारम्भिक अवस्था में पौधों की धीमी गति से बढ़वार होने के कारण, खेत में खरपतवारों की संख्या अधिक होती हैं। यदि खरपतवार समय पर नियन्त्रित नहीं किये जाते है तो उपज में भारी गिरावट आ जाती है। तिल की फसल में अनेक प्रकार के खरपतवार जैसे चन्दलिया, सफेद फूली, ऊँट गूगरा, लोलरू, मोथा व गोखरू इत्यादि आते हैं।

खरपतवार की रोकथाम के लिये बुवाई की जाये तो निराई–गुड़ाई के 20–25 दिन बाद या जब पौधे 15–20 सेमी. लम्बे हो जायें तो निराई–गुड़ाई करके खरपतवार अवश्य निकाल देने चाहिये। खरपतवारों के प्रभावी नियंत्रण हेतु फसल की बुवाई के 3 दिन के अन्दर एलोक्लोर 1.25 लीटर प्रति हे० की दर से प्रयोग करे फिर आवश्यकतानुसार 30 दिन बाद एक निराई–गुड़ाई अवश्य करें।

सिंचाई

जब पौधों पर 50–60 प्रतिशत तक फली लग जाये और उस समय वर्षा न हो तो एक सिंचाई करना चाहिये।

कीट नियंत्रण

1. पत्ती व फल छेदक

इस कीट का प्रकोप जुलाई से अक्टूबर तक रहता है। इसकी सूंड पत्तियों, फूलों व फलियों को हानि पहुंचाती है। इस कीट की लटें पौधों पर जाला बनाती हैं, जिससे पत्तियाँ आपस में जुड़ जाती है और पौधे की बढ़वार रूक जाती है।

इसके नियंत्रण के लिये क्यूनालफास 25 ई.सी. प्रति हे० के हिसाब से फूल व फली आते समय छिड़काव करें। कीड़ों का प्रकोप अधिक होने की अवस्था छिड़काव करें।

रोग नियंत्रण

तिल की फाइलोडी

यह रोग माइकोप्लाज्मा द्वारा होता है। इस रोग में पौधों का पुष्प विन्यास, पत्तियों के विकृत रूप में बदलकर गुच्छेदार हो जाता है। इस रोग का वाहक कीट फुदका है।

इसके नियंत्रण के लिये मिथाइल–ओ–डिमेटान (25 ई.सी.) 1 लीटर प्रति हे० की दर से छिड़काव करें तथा तिल की बुवाई समय से पहले न करें।

झुलसा एवं अंगमारी

इस बीमारी में पत्तियों पर छोटे भूरे रंग के शुष्क धब्बे दिखाई देते हैं। ये धब्बे बड़े होकर पत्तियों को झुलसा देते हैं।

इसकी रोकथाम के लिये 2.5 किग्रा. मैकोजब प्रति हे० की दर से आवश्यकतानुसार छिड़काव करें।

कटाई

जब पौधों की पत्तियाँ एवं फलियाँ पीली पड़ जायें तथा पत्तियाँ गिरने लगें तो फसल की कटाई कर लेनी चाहिये। फसल को 5–7 दिनों तक सुखाने के बाद पौधों से बीजों को थ्रेशर द्वारा या डंडे द्वारा अलग कर लेना चाहिये। भण्डारण से पूर्व बीजों में 8 प्रतिशत से कम नमी होनी चाहिये। ●

उन्नतिशील प्रजातियाँ

प्रजाति	विशेषता	पकने की अवधि (दिनो में)	तेल (%)	उपज कु०/हे०	उपयुक्त क्षेत्र
टा–78	फलियाँ एकल सन्मुखी	80–85	45–48	6–8	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
तरूण	फलियाँ एकल सन्मुखी	80–85	50–52	8–9	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
आर.टी. 351	बहुफलीय एवं सन्मुखी	80–85	50–52	9–10	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश
आर.टी. 346	बहुफलीय एवं सन्मुखी	85–90	50–52	9–10	सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश

कद्दूवर्गीय सब्जियों का कीटों से बचाव

*प्रेम शंकर, **एस.एन. सिंह, ***आर.वी. सिंह, एवं ****राकेश शर्मा

कद्दूवर्गीय सब्जियां गर्मी तथा वर्षा के मौसम की महत्वपूर्ण फसलें हैं। फसलों में उत्पादन के दौरान अनेकों प्रकार के कीटों का प्रकोप रहता है, जिससे हमें जो आमदनी मिलना चाहिए वह नहीं हो पाती अतः किसान भाइयों को फसलों में लगने वाले कीटों की पहचान एवं प्रबन्धन पर ध्यान रखना चाहिए।

कद्दू का लाल कीट/रेड पम्पकिन बीटल

इस कीट की ग्रब व प्रौढ़ दोनों ही अवस्था फसलों को हानि पहुंचाती है, इस कीट के प्रौढ़ बेलनाकार, जिनका ऊपरी रंग गेरूआं लाल, पीला होता है ग्रब अवस्था पौधों की मुलायम जड़ों को खुरच–खुरच कर खाती हैं जबकि प्रौढ़ कीट पौधों की मुलायम कलिका व पत्तियों को काटकर खाते हैं। इससे पौधों की वृद्धि रूक जाती है तथा पत्तियां छिद्रयुक्त दिखाई देती है, इस कीट का प्रकोप मध्य फरवरी से सितम्बर तक रहता है।

प्रबन्धन

- फसल खत्म होने पर बेलों को खेत से निकालकर जला देना चाहिए।
- फसल की अगेती बुआई से कीटों के प्रभाव को कम किया जा सकता है।
- संतरी रंग के भृंग को सुबह के समय इकट्ठा करके नष्ट कर दें।
- फसल में इन कीटों की ग्रब अवस्था में जमीन में रहकर जड़ों को काटती हैं, जिसकी रोकथाम हेतु क्लोरोपायरीफास 20 ई.सी. की 2.5 ली/हे. मात्रा को फसल की बुआई के एक माह बाद सिंचाई जल के साथ प्रयोग करें, जिससे की पौधों में मौजूद ग्रब लटों को नष्ट किया जा सके।
- नीम तेल (नीमारीन) की 5 मिली./ली. पानी की दर से 10 दिन के अन्तराल पर खड़ी फसल में छिड़काव करते रहना चाहिए या घर की राखी या जीवामृत का छिड़काव करते रहना चाहिए।
- कीट की उग्र अवस्था होने पर फ्रिवोनिल 5 प्रतिशत एस.सी. 2 मिली. या इन्डोक्साकार्व 445 एस.सी. की 0.5 मिली. के साथ सरफेक्टेन्ट/स्टीकर 4 मिली. की मात्रा को मिलाकर 5 ली. पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

सफेद मक्खी

इस कीट के शिशुओं व वयस्कों के रस चूसने से पत्ते पीले पड़ जाते हैं। इसके मधुबिन्दु पर काली फफूंद आने से पौधों में भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। सफेद मक्खी फसलों में विषाणु रोग भी फैलाती है।

प्रबन्धन

- इल्लियों को इकट्ठा कर नष्ट कर देना चाहिए।
- नीम तेल (नीमारीन) की 5 मिली./ली. पानी की दर से 40––40 दिन के अन्तराल में फसल पर छिड़काव करते रहना चाहिए।
- कीट का प्रकोप होने पर एसीटामीप्रिड 20 प्रतिशत एस.पी. की 250 ग्राम/हे. या थायामेथोक्जाम 25 प्रतिशत डब्ल्यू जी. की 200 ग्राम/हे. के साथ स्टीकर मिलाकर 500–600 लीटर पानी घोलकर छिड़काव करें।

फल–मक्खी

- आक्रमण का समयः– मार्च से अक्टूबर
- यह कीट विकसित मुलायम कली को नुकसान पहुंचाता है।
- इन कीटों की मादा मक्खी अपने अण्डे रोपड़ को मुलायम फलों के गूदे में घुसकर उनमें अण्डे देती है, जिनसे 4 या 2 दिन में गिडार फलों में अंदर ही निकलकर अपशिष्ट पदार्थ छोड़ती हैं जिससे फल सड़ने लगता है, फलों के क्षतिग्रस्त भाग से तीव्र गंध आने लगती है तथा फल टेढ़े–मेढ़े विकृतियुकत हो जाते हैं जिससे फलों की गुणवत्ता खराब होती है, जिससे बाजार मूल्य में भारी गिरावट मिलती है।

*वैज्ञानिक, (फसल सुरक्षा), **अध्यक्ष, ***वैज्ञानिक (कृषि प्रसार), ****प्रक्षेत्र प्रबन्धक, कृषि विज्ञान केन्द्र, बस्ती

प्रबन्धन

- वयस्क/प्रौढ़ को आकर्षित करने के लिए मिथायल यूजीनॉल गंच्यपाश ट्रैपों 8–40 की संख्या में प्रति एकड़ फसल में लगायें, जिनके प्रयोग से फल मक्खी कीटों को आसानी से नष्ट किया जा सकता है।
- फल मकक्खी के संक्रमण से क्षतिग्रस्त फलों को एकत्रित कर मिट्टी में गाड़ देना चाहिए। इधर–उधर फेंकना या खुले में न छोड़े अन्यथा मैगट अवस्था से गुजरकर फलमक्खी कीटों की संख्या में वृद्धि होने से इस कीट का प्रकोप तेजी से होने लगता है।
- खेतों की निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए, विशेषकर शुरू की अवस्था में जिससे की बेल के आस–पास भूमि में पड़े दबी कृमि कोष अवस्था में धूप में भक्षी व परजीवी कीटों द्वारा नष्ट किया जा सकता है।
- यह कीट दिन व रात के समय मक्का के पौधों में शरण कर लेती हैं, इसलिए बेल वाली फसलों के चारों ओर 3–4 पंक्तियों में मक्का फसल लगाएं तथा इसी तरह 50 मीटर की दूरी या बेलवाली फसलों के मध्य मक्का की फसल की पंक्तियां/कतारें लगाएं। जब मक्का पौधों पर फल मक्खी कीट की उपस्थिति दिखाई दे तब केवल मक्का के पौधों पर एसीटामीप्रिड 20 प्रतिशत एस. पी. की 0.5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी के साथ स्टीकर मिलाकर प्रयोग करें।
- विष प्रलोभन का प्रयोग एक किग्रा. गुड़ को 4.5 ली. पानी में घोलकर उसमें एसीटामीप्रिड की 0.5 ग्रा. मात्रा को मिलाएं। अब इसे घोलकर 40–42 जगहों पर फसल के मध्य अलग–अलग दूरी पर रखें, जिससे फल मक्खियां घोल पीकर नष्ट हो जाएगीं।

पत्तियों का सुरंगी कीट, चेपा, हरा तेला व माइट

ये कीट आकार में छोटे होते हैं, इसमें शिशु व प्रौढ़ दोनों ही अवस्था में पौधों के मुलायम भागों, पत्तियों तथा कलिकाओं का रस चूसकर कमजोर बना देती हैं। पत्तियों का सुरंगी कीट पत्तियों के मध्य शिरा में अण्डे देती हैं। जिससे बारीक गिडार निकलकर पत्तियों की दोनों सतह पर टेढ़ी–मेढ़ी लाइनें दिखाई देने लगती हैं, फसलों में इन कीटों का प्रकोप पूरे फसल अवधि के दौरान जारी रहता है।

प्रबन्धन

- फसल को खरपतवार रहित रखें।
- हरा तेला व सुरंगी मक्खियों को नष्ट करने के लिए लाइट ट्रैप का फसलों में प्रयोग करें। अतः रात को फसल क्षेत्र में लाइट ट्रैप लगाएं।
- लगातार 0–40 दिनों के अंतराल पर नीम तेल (नीमारिन) की 5 मिली./ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।
- प्रकोप की उग्र अवस्था में मेथोयिल कीटनाशी की 2 मिली. मात्रा के साथ स्टीकर 1 मिली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।●

पूर्वाञ्चल खेती पढ़िये : खेती में आगे बढ़िये

- फसलोत्पादन, सब्जी उत्पादन, बागवानी, मत्स्य तथा पशुपालन विषय की वैज्ञानिक जानकारी देने वाली लोकप्रिय मासिक पत्रिका पूर्वाञ्चल खेती। चाहे प्रगतिशील किसान हों, बागवान हों या मत्स्य/पशुपालक, अनुसंधान/प्रसार कार्यकर्ता अथवा कृषि संकाय के छात्र तथा साथ ही साथ सभी के लिये उपयोगी आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, की हिन्दी मासिक पत्रिका पूर्वांचल खेती।
- पूर्वाञ्चल खेती की सदस्यता शुल्क रु0 270.00 मात्र (किसानों, छात्रों एवं लेखकों के लिए रू0 220.00 मात्र) है, जो निदेशक प्रसार, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या को मनीआर्डर/नकद भुगतान द्वारा प्रेषित किया जाना चाहिए। सदस्यता शुल्क भेजते समय अपना नाम व पता स्पष्ट अक्षरों में लिखना न भूलें। आपका सुझाव उत्तरोत्तर सुधार हेतु प्रार्थनीय है।

जून माह में किसान भाई क्या करें

फसलों में

डॉ. सौरभ वर्मा
विषय वस्तु विशेषज्ञ (सस्य विज्ञान)

1. गेहूँ के दाने में 10–12 प्रतिशत नमी रहने पर फसल की कटाई दाँतेदार नरेन्द्र हंसिया से करें। दांतों से काटें और यदि कट की आवाज आये तो समझें नमी उपयुक्त है।
2. मूँग का बीज शोधन करने के बाद मूँग बोने से पहले राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना न भूलें। कल्चर को मिलाने के लिए आधा लीटर पानी में 50 ग्राम गुड़ घोलकर उबालने के बाद ठंडा कर लें और इस घोल में कल्चर का पैकट (200 ग्राम) मिलाकर मिश्रण तैयार कर लें, जिसे बोने के 2–3 घण्टे पहले 10 किग्रा बीज में मिला लें। बीज का बोआई 10 बजे के पहले और सायंकाल 4 बजे के बाद ही करें।
3. आबादी के निकट अथवा आलू के बाद मूँग बोये जाने वाले खेतों में नत्रजन उर्वरक का प्रयोग न करके केवल 40–60 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।
4. गन्ना, गेहूँ अथवा राई के बाद यदि मूँग की फसल लें तो 10 किग्रा नत्रजन एवं 40 किग्रा फास्फोरस प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।
5. उर्वरकों की पूरी मात्रा बोते समय कूड़ों में बीज से 2–3 सेमी नीचे दें।
6. समय में बोई गई मूँग की फसल में पहली सिंचाई आवश्यकतानुसार 20–25 दिन पर करें।
7. चना, मटर, अरहर की कटाई पकने पर करें।
8. नमी की पहचान गेहूँ की भांति करें।
9. गेहूँ की फसल के साथ बोई गई सरसों की मड़ाई अलग से करें।
10. सूरजमुखी की फसल में सिंचाई, निराई एवं गुड़ाई करें।

सब्जी एवं उद्यान में

डॉ. एस.के. वर्मा
विषय वस्तु विशेषज्ञ (सब्जी विज्ञान)

1. आलू, चना, सरसों की कटाई के बाद खाली खेतों में लता वाली सब्जियों जैसे – करेला, टिण्डा, ककड़ी, खीरा, लौकी एवं तोरई आदि की बोआई 1 मीटर ग 50 सेमी की दूरी पर करें।
2. खेत में नत्रजन, फास्फोरस और पोटाश की मात्रा 40:30:30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से दें।
3. दाल वाली सब्जियां जैसे – लोबिया की शीघ्र पकने वाली पूसा कोमल एवं पूसा फागुनी का 20 किग्रा बीज एवं उर्वरक 25:50:30 न.फा.पो. प्रति हेक्टेयर डालें।
4. फली वाली सब्जियां जैसे भिण्डी की उन्नतशील प्रजातियां पूसा सावनी, परभनी क्रान्ति एवं पंजाब–7 का 10–12 किग्रा बीज प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें।
5. उर्वरक की मात्रा 100:50:50 प्रति हेक्टेयर रखें।
6. जड़ वाली सब्जियां जैसे मूली की अच्छी किस्में पूसा चेतकी एवं पूसा हिमानी बोयें।
7. पत्ती वाली सब्जियां में चौलाई एवं कुल्फा की बोआई सह फसल के रूप में करें।
8. बागों में सिंचाई उचित समय पर करें।
9. अमरूद अथवा नींबू प्रजाति के अंकुरित पौधों को क्यारियों में अथवा पालीथीन की थैलियों में स्थानान्तरित करें।

संकलनकर्ता : डॉ. आर.आर. सिंह, प्राध्यापक, प्रसार निदेशालय, आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या, उ.प्र.

पौध संरक्षण

डॉ. वी. पी. चौधरी

सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)

1. गन्ना में दीमक के नियंत्रण के लिए गामा बी, एच.सी. 3.75 लीटर सिंचाई के पानी के साथ प्रति हेक्टेयर प्रयोग करें

2. अगोला बेधक कीट निंयत्रण के लिए डाइमेथोएट या इण्डोसल्फान 35 ई.सी. 1.25 लीटर अथवा डाइमेक्रान 250 मिली प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

3. मूंग में पीला चित्रवर्ण मोजैक रोग से बचने के लिए रोग वाहक कीटों का नियंत्रण मिथाइल ओडेमेटान 25 ई.सी. अथवा डाईमेथोएट 30 ईसी को एक लीटर अथवा इण्डोसल्फान 35 ईसी 250 मिली को 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर 2 सप्ताह के अन्तर पर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

4. सूरजमुखी फसल में पत्तियों का झुलसा अथवा सिर गलन रोग लगा है तो नियंत्रण हेतु डाइथेन एम 45 अथवा कर्वेन्डाजीम का एक किग्रा दो किग्रा प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

5. कद्दू कुल की सब्जियों में बुकनी रोग का नियंत्रण कैरोथेन 600 मिली अथवा घुलनशील गंधक 3 किग्रा 800 से 1000 लीटर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।

7. कटहल के फल गलन रोग की रोकथाम के लिये जिंक कार्बोमेट के 0.2–0.25 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

8. नीबू की प्रजाति के फलों को गिरने से रोकने के लिये 2–4 डी के 10 पी पी एम एक मिग्रा प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

पशुपालन

डॉ. एस.एन. लाल

विषय वस्तु विशेषज्ञ (पशु विज्ञान)

1. गर्भित पशुओं के उत्तम स्वास्थ्य तथा भ्रूण के उचित विकास के लिए अतिरिक्त रातब अवश्य दें।

2. दुधारू पशुओं को गर्मी तथा लू से बचाने के लिए उन्हें दिन में दो–तीन बार स्वच्छ तथा ताजे पानी से नहलाना चाहिए तथा साथ ही साथ पीने के लिए उन्हें साफ व ताजा पानी दिन में कई बार देना चाहिए।

3. दुधारू पशुओं में मुख्यतः संकर नस्ल की गायों को गर्मी तथ लू से बचाव हेतु पशुशाला के खिड़कियों पर बोरे के पर्दे लगा दें और समय–समय से उस पर पानी का छिड़काव करते रहें।

4. जो किसान भाई अभी तक हरे चारे की बोआई न कर पाये हों, वे इस माह के अन्त तक मीठी, सूडान मक्का तथा लोबिया की बोआई अवश्य कर दें।

5. पशुओं को गलघोंटूँ बीमारी से बचाव हेतु इस माह के अन्त तक टीकाकरण अवश्य करा दें।

6. अधिक गर्मी तथा लू के कारण मुर्गियां आहार लेना कम कर देती हैं। अतः अनके आहार में प्रोटीन की मात्रा बढ़ा देना चाहिए, जिससे उत्पादन पर कुप्रभाव न पड़े।

7. मुर्गियों को गर्मी तथा लू से बचाने के लिए कुक्कुट गृह के खिड़कियों तथा दरवाजों पर बोरे के पर्दे लगा दें तथा समय–समय पर पानी का छिड़काव करें।

8. गर्मी के प्रभाव को कम करने के लिए मुर्गियों को विटामिनए विटामिन बी काम्पलेक्स तथा एनटीबायोटिक दवाओं को स्वच्छ व ताजे पानी में मिला कर दें।

9. अण्डा तथा मांस उत्पादन कम न हो इसके लिए मुर्गी बाड़े में तथा मुर्गियों पर साइथियान अथवा मैलाथियान दवा का छिड़काव कर दिया जाय।●

प्रश्न किसानों के, जवाब वैज्ञानिकों के

प्रश्न : मोथा घास का निदान कैसे करें?
(श्री विशम्भर दयाल वर्मा, ढौरा कनकू, बाराबंकी)

उत्तरः गर्मी की जुताई के बाद नये उगे मोथा पर ग्लाइफोसेट (41 प्रतिशत एस.एल) 2–3 ली, 450–500 लीटर पानी में घोलकर ढीली धूप में पर्णिम छिड़काव करें तथा उगने तक छोड़ दें। इस प्रकार मोथा जड़ से समाप्त हो जाता है। यदि कुछ मोथा रह जाता है तो एक छिड़काव पुनः करने से पूरी तरह मोथा जड़ से समाप्त हो जाता है क्योंकि मोथा की जड़ों में सात गाँठें पायी जाती हैं एक भी गाँठ रह जाने पर पुनः निकलने की संभावना रहती है।

प्रश्न : धान की फसल में बलियाँ पीले रंग के फटे दाने निकलते हैं इसका निदान बतायें?
(श्री अजय राय, सरहरी, गोरखपुर)

उत्तरः इसे फाल्स स्मट रोग के नाम से जाना जाता है इसके निदान के लिए धान का बीज शोधन बेरन डालने से पूर्व 2 ग्राम कार्बन्डाजिम प्रति किग्रा बीज की दर से शोधित करें। रोग रहित बीज का प्रयोग करें। कीट निमेलय भी आवश्यक है।

प्रश्न : धान की खड़ी फसल में नोंक से सुढाती है। यह हर वर्ष मसूरी धान में प्रायः आती है बोने से पूर्व कोई उपाय हो तो निदान बतायें?
(श्री राजेन्द्र सिंह, समधीपुर, आजमगढ़)

उत्तर : यह धान की बैक्टिीरियल लीफ ब्लाइट रोग के कारण होता है। जेन्थोमोनास आराइजी द्वारा नर्सरी में विल्टिंग तथा खड़ी फसल में नोक फसले सूखते हुए पूरा पौधा भी सूख जाता है। इसके निदान के लिए खेत साफ–सुथरा खरपतवार रहित तथा रोगग्रसित फसल अवशेष से रहित होना चाहिए। संतुलित उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। 15 ग्राम स्ट्रेप्टोसाइक्लीन, 38 ग्राम ई.श्रामा सी. या 2 ग्राम प्रति ली पानी में कार्बेन्डाजिम के साथ भिगोकर रातभर रखकर निकालकर छाये में ढक देने से जमाव अच्छा होने के साथ बीज जनित व नर्सरी में मिट्टी में उपलब्ध बैक्टीरिया व फंगस का प्रकोप कम हो जाता है।

प्रश्न : धान, मक्का व अरहर में दीमक की समस्या का निदान कैसे करें?
(श्री हरेराम चौरसिया, मनियर, बलिया)

उत्तरः फसल बोने से पूर्व ऐसे क्षेत्रों में कच्चे गोबर का प्रयोग न करें तथा फलस अवशेष भी नदर कर दें। प्रकोप होने पर सिंचाई जल के साथ क्लोरोफाइरी फास 20 ई.सी. 2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

प्रश्न : मुर्गीपालन प्रारम्भ करना चाहते हैं, कैसे करें?
(श्री गुड्डू वर्मा, गोसाईंगंज, जनपद–अयोध्या)

उत्तरः मुर्गीपालन दो प्रकार से किया जाता है एक अण्डा उत्पादन के लिये, दूसरा मांस (ब्रायलर) उत्पादन। अण्डा उत्पादन हेतु सबसे अच्छी नस्ल ह्वाइट लेगहार्न पायी जाती है जो वर्ष भर में लगभग 280–300 अण्डे का उत्पादन करती है। इसके लिये बिछावन पद्धति और केज में मुर्गियों को पाला जाता है। दूसरा ब्रायलर पालन जिसे पूर्वांचल में बहुत से किसानों द्वारा किया जा रहा है। यह बहुत कम समय में अर्थात 35–40 दिन में 800–2000 ग्राम वजन तक हो जाता है जिसे बाजार के आवश्यकता अनुसार बेच दिया जाता है। ब्रायलर पालन के लिये जहाँ मुर्गी घर बनाना है वह जगह ऊँचा होना चाहिये, पानी न रूकता हो, बाजार के नकदीक तथा आने जाने के लिये सड़क होना आवश्यक है। एक ब्रायलर के लिये एक वर्गफुट स्थान की जरूरत पड़ती है जिसे अच्छे प्रबन्धन एवं सन्तुलित आहार खिलाकर कम समय में अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अधिक जानकारी के लिये आचार्य नरेन्द्रदेव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या के कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र पर आकर सम्पर्क कर सकते हैं।●

पंजीयन संख्या - 54461/91

डाक पंजीयन संख्या एल. डब्लू./एन.पी. 34

प्रसार निदेशालय

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय

कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

द्वारा

कृषि तकनीकी सूचना केन्द्र

के अन्तर्गत प्रकाशित ग्रामोपयोगी पुस्तकें

पुस्तक	मूल्य रु.
आधुनिक मधुमक्खी पालन एवं प्रबन्ध	20.00
जिमीकन्द की खेती	15.00
मशरूम उत्पादन एवं उपयोगिता	12.00
किसानोपयोगी फसल सुरक्षा तकनीक	50.00
फसल उत्पादन तकनीक	35.00
जीरो टिल सीड कम फर्टी ड्रिल	10.00
फल–सब्जी परीरक्षण एवं मानव आहार	50.00
गन्ने की आधुनिक खेती	15.00
जीरो टिलेज गेहूँ बुवाई की एक विश्वसनीय तकनीक	20.00
केचुआ पालन (वर्मीकल्चर) एवं वर्मी कम्पोस्ट उत्पादन	10.00
व्यावसायिक कुक्कुट (ब्रायलर) उत्पादन	20.00
फसलों के सूत्रकृमि रोग एवं उनका वैज्ञानिक प्रबन्धन	25.00
आय संवर्धन हेतु प्रमुख सब्जियों की उत्पादन तकनीक	25.00
गृहणियों के लिए बेकिंग कला	25.00
स्वच्छ दूध उत्पादन तकनीक एवं उसका महत्व	20.00
गायों एवं भैसों के मुख्य रोग, टीकाकरण एवं संतुलित पशु आहार	20.00
मछली पालन	40.00
फसल अवशेष प्रबंधन	30.00

प्रति रूपये 25/–मात्र

मुद्रित

सेवा में,
श्री/श्रीमती

प्रेषक:
प्रसार निदेशालय
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय
कुमारगंज, अयोध्या – 224 229

आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या की ओर से प्रो. ए.पी. राव निदेशक प्रसार द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित